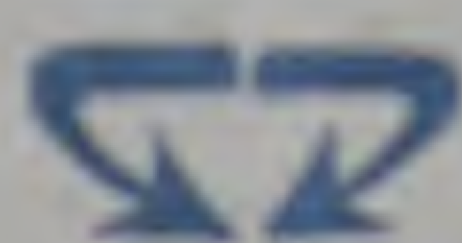
❀ श्रीश्रीगौरहरिर्जयति ❀

卐 भाषाभागवत 卐

(समाहात्म्य प्रथम एवं द्वितीय स्कन्ध)

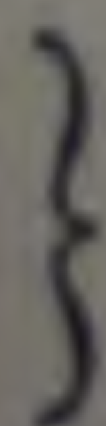


महाप्रभु-गौरांगदेववीथिपथिक—

श्रीश्रीरसजानि वैष्णवदासजी विरचित



झूलनतृतीया
सम्वत् २०१७



प्रकाशक—
कृष्णदासबाबा,
कुसुमसरोवर निवासी (मथुरा)

◈ बड़े बाबाजी श्रीश्रीराधारमणचरणदासदेवो जयति ◈

भज–निताइ गौर राधेश्याम ।
जप–हरे कृष्ण हरे राम ॥
श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द ।
हरे कृष्ण हरे राम राधे गोविन्द ॥

–कृष्णदास

भूमिका

प्रस्तुत भाषाभागवत के रचयिता श्रीरसजानिवैष्णवदास जी का संक्षिप्त परिचय यह है कि आप भक्तमाल के प्रसिद्ध टीकाकार श्रीप्रियादास जी के पौत्र तथा परम भागवत श्रीहरिजीवन जी के शिष्य थे। स्वयं आपने भागवतमाहात्म्य के परिशिष्ट में लिखा कि—

श्रीप्रियादास रसरासि कों पौत्र वैष्णवदास ।
ताही कौ रसजानि तिन कीनौं नाम प्रकाश ॥
श्रीहरिजीवन गुरु कृपा पाय सोई रसजानि ।
श्रीभागवत माहात्म्य की भाषा करी बखानि ॥

आपने ब्रजभाषा में छन्दोवद्ध कई ग्रन्थ लिखे हैं। जिनमें से (१) गीतगोविन्दरस (२) भाषाभागवत (समस्तस्कन्धों के) (३) भक्तमालमाहात्म्य (४) भक्तिरसवोधिनी (भक्तमाल की टिप्पणी) (५) भक्तिरत्नावली (भाषा) ये पाँच ग्रंथ प्राप्त हैं।

गीतगोविन्दरस में आपने अपने सम्प्रदाय के पूर्वाचार्य्य, रसिक शिरोमणि, रस के आचार्य्य श्रीजयदेवगोस्वामि जी के द्वारा विरचित प्रसिद्ध गीतगोविन्द संस्कृत काव्य का सरसता के साथ ब्रजभाषा में नाना छन्दों में सर्व साधारण बोधार्थ पद्यवद्ध अनुवाद किया है। इसका रचनाकाल सम्वत् १७७७ से पहले अनुमान किया जाता है। ग्रंथ की पुष्पिका में–

“दास वैष्णवदास यह रसिकन हित सुखरास ।
भाषा करि वर्नन कियो सुख हिय होय विकास ॥

इति श्रीगीतगोविन्द कविराज जयदेवकृत भाषायां वैष्णवदास रसजानि कृतायां द्वादश सर्गः संवत् १७७७ पौष बदी २ लिखितं “जयदेव” ॥ यदि इस समय को लिपीकार कृत माना जाता है तो इससे पहले ग्रंथ की रचना व प्रसिद्धि होना अवश्यम्भावी है। यदि यह ग्रन्थकार का उल्लेख है तो १७७७ सम्वत् मान

लेने पर कोई हानि नहीं है, क्योंकि ग्रंथकार के द्वारा भाषा-भागवत रचे जाने का समय १८२२ से लेकर १८३१ सम्वत् पर्य्यन्त है। प्रायः समस्त स्कन्धों की पुष्पिका में इसी समय का निर्देश दिया गया है, गीतगोविन्द की रचना के पश्चात् ही भाषा भागवत की रचना सिद्ध होती है। गीतगोविन्दरस के प्रारम्भ में—

वंदि कृष्णचैतन्य चंद दुति करे अनंद जो।
कहौं गीतगोविंद सुने होय महानंद सों ॥१॥
रसिक अशेषनि को नरेश जयदेव भेव वित।
कियौ अमल रसपान क्यों वे रस लहै समलचित ॥
ता रस कौ उद्धार सार सौरभ सरसानौ।
तिहि हित रसिक समूह व्यूह मधुकर घुमड़ानौ ॥

ग्रंथ की समाप्ति में—

श्रीमहाप्रभु चैतन्य तिनकी दया फली।
कलि अवतार सुधन्य पतितन वली भली ॥
जयति गीतगोविन्द गावहु रसिक अहो।
श्रीप्रियादास कवि भूप रसिकनि मुकुटमनी।
जग जस छयौ अनूप तिन की कृपा कनी।
जयति गीतगोविंद गावहु रसिक अहो ॥
श्रीहरिजीवन नाम मेरे गुरु सुमहा।
तिनकौ कर अभिराम नित मम शीश अहा ॥

गीतगोविन्द में जिस प्रकार द्वादश सर्ग हैं ठीक उसी प्रकार इसमें द्वादश सर्ग हैं। गीतगोविन्द की अष्टपदी जिन राग-रागिणियों से विरचित है वे सब इसमें यथा रूप ब्रजभाषा में उसी प्रकार मौजूद हैं। इसकी प्राचीन प्रति नंदकिशोरजी मुकुटवाले (वृन्दावन) के पास, गोस्वामि श्री अद्वैतचरणजी के पुस्तकालय में, हमारे पास भी मौजूद हैं। हमारी वाली प्रति अत्यधिक प्राचीन लिपी है। इन प्रतियों को देखकर इसकी

प्रेस कापी प्रस्तुत की गई थी। लगभग १५ वर्ष पहले हमने इसका प्रकाशन भी किया है।

वैष्णवदास जी के द्वारा विरचित दूसरा ग्रंथ भाषा भागवत है, जोकि समस्त भागवत का चौपाई छन्द में विशुद्ध ब्रजभाषा में लिखा गया है। प्रत्येक अध्याय के पहले दोहा छन्द से अध्याय का दिग्दर्शन किया गया है। इसके माहात्म्य तथा प्रत्येक स्कन्धों के प्रारम्भ में—

रसिकभूप हरिरूप पुनि श्रीचैतन्य स्वरूप।
हरै कूप अनुरूप रस उन्हत्यो बहै अनूप ॥

इस प्रकार महाप्रभु की वन्दना की गई है। यह ग्रन्थ मूल भागवत का ज्यों का त्यों सरल अनुवाद है। मूलगत शुद्ध अनुवाद के कारण इसकी प्रसिद्धि उस समय काफी होगई थी। नाना स्थानों में इसकी प्राचीन प्रतियाँ मौजूद है। इसकी कई प्रति तो देहली में हैं। नन्दकिशोरजी मुकुट वाले के पास एक प्रति, मांट के पास सुरीर हेतराम पुस्तकालय में एक प्रति, मुरादाबाद में एक प्रति, हमारे पास भी एक प्रति मौजूद है। मुरादाबाद की प्रति को छोड़कर अन्य प्रतियों को मैंने देखा है। लगभग १५००० चौपाई से इसकी रचना हुई है। ग्रंथकार की विशाल विद्वत्ता इस रचना से स्पष्ट है। मैंने पहले इसके दशम, एकादश, द्वादश इन तीनों स्कन्धों का एक ही जिल्द में दूसरा भाग नाम से प्रकाशन किया है। सम्प्रति माहात्म्य के साथ प्रथम, द्वितीय स्कन्ध का प्रकाशन करने में वाध्य हुआ। तृतीय से नवम स्कन्ध का प्रकाशन करने की आगे महती इच्छा है। इच्छा तो थी कि प्रथम से नवम पर्य्यन्त एक ही साथ एक ही जिल्द में प्रथम भाग नाम से प्रकाशित करने की। परन्तु इस समय अर्थाभाव के कारण यह कार्य्य न हो सका। बहुत दिनों से प्रस्तुत माहात्म्य के साथ दोनों स्कन्ध छप कर प्रेस में रखे हुए थे। स्वल्प जीवन है, नाना प्रकार संकल्प विकल्प उठते

रहते हैं। अतः शीघ्र ही इसी रूप से दोनों को प्रकाशित करने में वाध्य हुआ।

इसके प्रकाशनार्थ अर्थ सहायता देने में दो व्यक्तियों का हाथ है। प्रथम स्कन्ध की अर्थ सहायता मुझे भक्तवर श्रीमान् आत्माराम मुजफ्फरनगर वालों के द्वारा प्राप्त हुई थी। दूसरे स्कन्ध के सहायक श्रीमान् केशवदेव जी (खंडेलवाल) जिनका गौलोकवास होगया है तथा जो मुझ पर अत्यधिक श्रद्धा रखते थे।

ग्रंथकार का तीसरा ग्रंथ-भक्तमालमाहात्म्य है प्रारम्भ में–

"रसिक रूप हरिरूप पुनि श्री चैतन्य स्वरूप।
हृदय कूप अनुरूप रस उझल्यौ बहे अनूप॥

शेष में–प्रियादास अति ही सुखकारी। भक्तमाल टीका विस्तारी॥
तिनको पौत्र परम रंग भीनों। भक्तन हित महात्म यह कीनौं॥

इसमें ८१ चौपाई तथा १० दोहे मौजूद हैं एवं भक्तमाल की महिमा कही गई है।

ग्रंथकार की एक कृति "भक्तिरत्नावलीभाषा" है। यह श्रीविष्णुपुरी गोस्वामि के द्वारा संकलित भक्तिरत्नावली की भाषा है। यह ग्रंथ छतरपुर महाराज की लाइब्रेरी में है।

ग्रंथकार की पांचवीं कृति भक्तिरसबोधिनी टिप्पणी है यह भक्तमाल एवं प्रियादास जी की टीका का आधार लेकर रची गई है। नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि इसकी एक प्राचीन प्रति महाराज बनारस की लाइब्रेरी में सुरक्षित है। १३४०, १५ × ६ इंच। इसके मंगलाचरण में महाप्रभु श्रीचैतन्यदेव के साथ उनके परिकरों की वन्दना है यथा-

"वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितंकृष्णचैतन्यदेवम्" इत्यादि।

गौड़ीय पक्ष में इतने पुष्ट प्रमाण रहते हुए भी रसजानिवैष्णवदास जी को निम्बार्की कह देना महान् भ्रम है।

—कृष्णदास बाबा

* श्रीश्रीगौरांगविधुर्जयति *

❀ भाषा भागवत महात्म ❀

दोहा–रसिक भूप हरि रूप पुनि, श्रीचैतन्य सरूप।
हृदै कूप अनुरूप रस, उझल्यौ बहै अनूप॥ १॥
श्रीप्रियादास रस रास कौ, पौत्र वैष्नवदास।
ताही कौं रस जानि कै, कीनो नाम प्रकास॥ २॥
श्रीहरि जीवन गुरु कृपा, पाय सोई रसजानि।
श्रीभागवत महात्म की, भाषा करी बखानि॥ ३॥
विष्णुरात श्रीबज्र हित, मुनि सांडिल्य बुलाय।
दूर कियौ संदेह कौ, या पहिले अध्याय॥ ४॥

देवी सरस्वती नारायन। बंदि नरोत्तम के पुन पायन॥
बहुर व्यास जु कौ सिरनाय। बर्नन करौं ग्रंथ सुख पाय॥

ऋषय ऊचुः—
अपनौ पौत्र परीछत आहि। गजपुर मैं दै राज सु ताहि॥
बज्रहि मथुरा मैं बैठाय। हरि के बिरह धर्म सुत छाय॥
अहो उत्तराखंड गए जब। तिन दोऊ कैसे कहा कियौ तब॥

सूत उवाच—
धर्म पुत्र बन गवन कियौ जब। बज्रनाभ के देखन कौ तब॥
नृपत परीछत मथुरा आए। बज्रनाभ लखि प्रेमभिगाए॥
पुन काका के सन्मुख जाय। लै गए महलन सीस नवाय॥
नृपहू बज्रहि उर लपटायौ। कृष्नचंद्र ही मैं मन छायौ॥
रोहिन्यादि कृष्न तिय जितीं। नृप सिर नाय सु पूजी तितो॥
पृथिवी पति जु परीछत आहि। तिनहू अति सनमान्यौ ताहि॥
सुख सो बैठि सु श्रमहि गमायौ। पुन नृप बज्रहि बचन सुनायौ॥

श्रीपरीक्षित उवाच—
हे सुत तुमरे पिता मुरारी। तिनने रच्छा करी हमारी॥
पुन मम पितरु पितामह जिते। दुख समूह ते राखे तिते॥

ताते हम ऊरन नहि ह्वैहैं । पै जो कहौ सोई हम कैहैं ॥
सोचो जिन धन रिपु सेना जे । मन लगाय सेवौ माता ये ॥
सुन यह बज्र हरषि के कही । अहो अपु उचित कहन कौ यही॥
तुव पित मोहि कियौ उपकार । दई धनुप विद्या निर्धार ॥
ताते तनक हू चिंता नाही । दृढ़ हौं छत्री धर्म सु माही ॥
पै इक चिंता आहि अपार । ताकौ कछु कीजै उपचार ॥
मैं नृप ह्वै बैठ्यौ मथुरा में । जन गए कहां परयौ चिंता में ॥
यह सुनि विष्नुरात राजा जो । बज्रनाभ संसय काटन सो ॥
बुलए श्री सांडिल्य नाम मुनि । नंदादिक के प्रोहित जे पुनि ॥
सोइ कुटी तजि आए मुनिवर । पूजित ह्वै बैठे आसन पर ॥
नृप इत उत की बात कही पुनि । ते सुनि हरषि दुहुँ बोले मुनि ॥
अहो चित दे ब्रज रहस सुनो अब । व्यापक ते ब्रज कहत याहि सब॥
गुनातीत परब्रह्म सु नाम । मुक्तनि अव्यय सुख कौ धाम ॥
तहाँ नंद नंदन जो अनूप । राजत हैं नित सुख के रूप ॥
आत्माराम और पूरन काम सो । अनुभौ करे प्रेम भीजे जो ॥
तिनकी आत्मा राधा नाम । तास रमन ते आत्माराम ॥
गोपी गोपरु गाय बिहार । ये ताके सु काम निर्धार ॥
ते नित ताके पूरन जाते । पूरन काम सु कहियत याते ॥
यह याकौ रहस्य जो आहि । प्रकृति ते परे सु कहियतु ताहि॥
माया करि खेलत हें ते जब । और तास लीला देखें तब ॥
जा लीला में तीन गुननि कर । पालन प्रलय सृष्टि होय नृप वर॥
यो तिहि द्वै लीला विचार की । इक वास्तवीरु व्यवहारि की ॥
सो वास्तवी जु आपै लहै । व्यवहारकी जीव जु चहै ॥
पहली विना सु दूजी नाही । दूजी मिलै न पहली माही ॥
व्यवहारिकी लीला जोई । हम तुमकौ गोचर है सोई ॥
तीनौ लोक जा धरनी माही । मथुरा मंडल हू है ताही ॥
ताही में ब्रजभूमि सु नामै । अहो दुर रह्यौ तत्व सु जामें ॥

कबहु कि प्रेम पूर्न जौ अहो । तिन्है तत्व सो भासत लहौ ॥
कबहु द्वापर अंत होय जब । गोप्य चरित देखन हारे तब ॥
इक ठौरें सब होय आय धर । तब सोई लीला प्रगट करत हरि॥
चाह निहारनि तहा मिलावन । ज्यौं अब त्यौं प्रगटत मन भावन॥
तब औरौ देवादिक जिते । हे नृप सब ठां प्रगटत तिते ॥
सबही के मन कौ मान्यौ कार । अंतर्ध्यान होत हे श्रीहरि ॥
ताते तीन भांति के प्रानी । प्रथम इहां हें हे सुखदानी ॥
एक नित्य इक चाहन हारे । तीजे देवादिक सु उचारे ॥
ते तौ पहल द्वारका माही । प्राप्त किये हरि संशय नाही ॥
पुन तिनको हति मूसल द्वार । थाप दिये निज निज अधिकार ॥
प्रेम रूप चाहन हारे जे । नित्यनि में जब राखि लए ते ॥
तब तेऊ अदृस्य भये याते । देखन कोऊ जोग्य न जाते ॥
व्यावहारकी लीला माही । जे जन ते तहां जोग्य सु नाही ॥
ते ह्यां आए देखौ अहौ । याही ते यह निर्जन लहौ ॥
यह हो बज्रनाभ ताते पुनि । चिंता करौ न मम बानी सुनि ॥
पुन अपु इहा बसावौ गाव । धरि हरि लीला उचित सु नाव ॥
अहो यह भूमि सेइयै आछै । सबै सिध तुम पैहौ पाछै ॥
रहो दीघ मथुरारु महावन । नंद गाव बरसानौ गोधन ॥
सेवौ कुंडरु कुंज नदी गिर । परजा बढ़ें तुम सुख पैहौ फिर॥
यह हे चिदानंद धरनी जो । तुमे जतन सो सेव्य आहि सो ॥
पुन इहा हरि लीला थल हे जे । मम करुणा करि तुमे फुरौ ते ॥
अहो बज्र जु ऊधव हें जो । ईहि सेये तुम कौ मिलिहैं सो ॥
ताते याकौ रहसि जु आही । मातनि सहत जानिहौ ताही ॥
यह कहि हरि सुमिरत गमने मुनि । बज्ररु विष्णुरात हरषे पुनि ॥

इति श्रीस्कंधपुराणे श्रीभागवतमहात्म्ये भाषा रसजानि कृते
प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

॥ द्वितीय अध्याय ॥

दोहा-कालिंद्री के बचन सुनि या दूजे अध्याय ।
सबही उधव को मिलन कियौ समाज बनाय ॥

ऋषय ऊचुः-
अहो सूत सांडिल्य गए जब । तिन दोउ कैसे कहा कीयौ तब ॥
सूत उवाचः-
इन्द्रप्रस्थ ते विष्णुराति तब । मथुरा ल्याय प्रजा राखी सब ॥
मथुरा और पुरातन वानर । माननीय ते किये भूप बर ॥
बज्रनाभ गहि तास सहाय । पुनि सांडिल्य अनुग्रह पाय ॥
श्रीगोविंद गोप गोपी के । लीला थल प्रकास किये नीके ॥
नावनि धरि बहु गांव बसाए । कूप बावरी कुंड बनाए ॥
श्रीगोविंदरु हरिदेवादि । प्रगट किये नृप रूप अनादि ॥
श्रीसिवादि कौ थापन कीयौ । भक्ति बढ़ी इह हर्ष्यौ हीयौ ॥
हरि जस गावत प्रजा उमाहै । ताही के राज्यहि सु सराहै ॥
एक दिन कृष्ण कांता जिती । कृष्ण बिरह सो व्याकुल तिती ॥
इक कालिंद्री आनंद छई । लखि मत्सर तजि बोलत भई ॥
हे सुंदर हम हरि तिय जैसे । तुमहूँ ता हरि की तिय तैसे ॥
हम तिह बिरह सु पीड़ित अहौ । हे कालिंद्री तुम न क्यौ न कहौ ॥
सो सुनि तिनकी देख सुधाई । बोली हसत सु करुणा छाई ॥
श्रीकालिंद्री उवाचः-
आत्माराम कृष्ण की अहौ । निश्चै राधा आत्मा लहौ ॥
ताकी हम दासी हैं जाते । बिरह हमैं छीवत नहीं ताते ॥
हरि तिय सब तिह अंस सु गाई । ताते है संजोग सदाई ॥
राधा है हरि हरि है राधा । बंशी तिह सु प्रेम की साधा ॥
हरि नख चंद्र पांति अभिराम । तिह संग ते चन्द्रावलि नाम ॥
और रूप कौ ग्रहन सु करिकै । रही दुहुनि सेवा रति भरिकै ॥
रुक्मिन्यादिक की प्राप्ति जो । मैं इनही के माहि लखी सो ॥

हरि ते तुमरौ हू नहि वियोग । पै न लखौ तुम ताते सोग ॥
ऐसे ही ह्या है नृप पूर । पहिले जब आए अक्रूर ॥
तब गोपिन के बिरहाभास । भयौ सु उधव कीयौ निरास ॥
तुमरौऊ तिनसों होहु मिलाप । तौ नित पिय संग बिहरौ आप ॥
यो सुनि कालिंदी ते हरि तिय । पुनि नै बोली भीज रह्यौ हिय ॥
निज प्रिय मिलन लालसा छाई । उधव दर्शन में मति लाई ॥
कृष्णकांता उवाचः-
हे सखी तुही धन्य जग मांही । पिय सो जासु बिरह है नाही ॥
जाते सिद्ध कामना तुमरी । सोई अब आहि स्वामनी हमरी ॥
पै उधव ते सिद्ध हमारी । सो क्यौं मिलै वहौ पिय प्यारी ॥
सूत उवाचः-
सुनि कालिंद्री बोली सही । सुमिरति कृष्ण कला सो रही ॥
कालिंद्री उवाचः-
चलत कृष्ण उधवहि कही हो । साधन भूमि बद्रिका आश्रम जो ॥
उधव साछात तहा राजे । जननि कौ ग्यान देत सुख काजें ॥
फल भूमी ब्रजभूमि जु आहि । प्रथमी हि सहित रहिसि दई ताहि ॥
फल ह्यां अंतरहित है जाते । उधव हु अलछ्य अब ताते ॥
गोवर्धन ढिग सखीथरा जो । तहा निश्चै श्रीउधव जु सो ॥
अंकुरबल्ली कौ सरूप करि । रहत है रज की चाह हिय धरि ॥
निज आनंद रूप जो आहि । श्रीहरि जू नै दीनौ ताहि ॥
ताते कुसुम सरोवर जहा । बज्र समेत सु रहि के तहा ॥
बीना बेनु मृदंग बजाय । करौ कीर्त्तन भक्ति बुलाय ॥
तब उधव कौ दरसन ह्वै है । तुमरौ मनवांछित सो कैहै ॥
सूत उवाचः-
यह सुनि सबहिन आनंद पायौ । कालिंद्री जू कौ सिर नायौ ॥
पुनि श्रीवज्ररु विष्णुराति जो । तिनकौ आय सुनायौ सब सौ ॥
सुनि दोऊ आनंदहि छए । तही जाय सब करत सु भए ॥

श्रीवृंदावन में गोवरधन वर । ता ढिग सखीथरौ कुसुमोपर ॥
तहं तलाव कृष्ण कीरतन छयौ। प्रगट सौ हरि बिहार ह्वै गयौ ॥
सबै अनन्य दृष्टि ह्वै पेखत । झार झूंकटनि ते तिन देखत ॥
प्रगटे श्री उधव अभिराम । धरे पीत पट माला स्याम ॥
बहुरो गुंज माल छबि पावति । गोपी वल्लभ कौ जस गावति ॥
तिहि आए समाज सोह्यौ यौ । फटक अटारी चंद ऊवै ज्यौं ॥
सब भए विसुधि डूबि सुख सागर । सुधि भए देखे उधव नागर ॥
हरि सरूप ताहि पूजत भए । सबै काम पूरन ह्वै गए ॥

इति श्रीस्कन्धपुराणे भागवत महात्म्ये भाषा रसजानि कृते
द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

॥ तृतीय अध्याय ॥

दोहा-उधव बरन्यौ भागवत या तीजे अध्याय ।
कलिजुग डांडनि परीछत पहले दयौ पठाय ॥

सूत उवाचः—

पुनि श्रीउधव जू ते लहे । कृष्न कीरतन जे झिल रहे ॥
बहुर परीछत सो लपटाए । आदर करि ये वचन सुनाए ॥
हे नृप तुम नित धन्य हो याते । कृष्न भक्ति करि पूरन जाते ॥
जो तुम कृष्न कीरतन माही । डूबि रहे कछु सुधि है नाही ॥
वज्ररु कृष्न तियनि में तुम जो । करी प्रीति हमनै देखी सो ॥
हे सुत तोहि उचित यह याते । तन वैभव हरि कौ दयौ जाते ॥
द्वारापुर बासिन के माही । ये जन धन्य सु संसै नाही ॥
जिनके ब्रज में वास करावन । अर्जुन को भाषी मन भावन ॥
अहो कृष्न कौ मन ससि आहि । राधा तास प्रभाव जु चाहि ॥
तिनकौ लीला वन किरननि करि । सोभित करत प्रकासति है हरि ॥
कृष्नचंद्र नित पूरन अहो । तास कला सोरह जे लहो ॥
जुक्त सहस्त्र प्रभा चिद्रूप । यह वन तिनही कौ सु सरूप ॥
अहो यह ब्रज दीन दुख हारी । रहे हरि दछन पाय मझारी ॥

या अवतार माहि हरि अहो । सोई जोग माया अति लहौ ॥
ताके बल सो निज भूलन करि । निश्चै ये व्याकुल हैं नृप वर ॥
कृष्ण प्रकास बिना जग माही । काहू होय सु ज्ञाननि नाही ॥
जीवनि कौ ताको प्रकास जो । माया करि ढपि रह्यौ अहो सो ॥
जब होय अठाईसो द्वापर । तब निज माया दूर करे हरि ॥
तबही तास प्रकास सु लहो । सुतौ काल अब बीत्यौ अहो ॥
और समें ताको प्रकास जो । हे नृप श्रीभागवत करत सो ॥
हरि जन याहि सुनै गावै जब । निश्चै तहां कृष्न आवै तब ॥
आधौऊ श्लोक भागवत को जहा । गोपिन सहत रहत हरि जु तहा ॥
याहि इहा न सुन्यो जिन पापनि । अपनो घात कियौ तिन आपनि ॥
नितही श्रीभागवत सुन्यौ जिन । मात तात तिय कुल तारो तिन ॥
याते विप्र सुविद्या पावै । छत्री बैरिन मारि भगावै ॥
बैस्य बहुत संपति को धारे । सूद्र सदा सुख सो दिन टारे ॥
काम तियन के पूर्न करै जौ । सेवै ताहि न भाग्यवान कौ ॥
बहुत जन्म करि सिधि जु आहि । सुनै भागवत पावै ताहि ॥
हरि की भक्ति बहुर बढ़वार । रहति है श्री भागोत मझार ॥
मोहि कृपा करि दियौ भागवत । सांख्यायन ते पाय बृहस्पति ॥
तिनकी कही कथा जो आहि । अहो परीछित सुनिए ताहि ॥
जहा भागवत की प्रसिधि जो । तासु संप्रदा को लखियै हो ॥

बृहस्पतिरुवाचः-

माया दिस श्रीकृष्न चहे जब । गुननि सो सिव विधि विष्न भए तब ॥
उत्पति पालन प्रलै मझारी । तीनौ कौ कीनौ अधिकारी ॥
विधि भयौ नाभ कमल ते सही । ह्वै तिन ता हरि जु सो कही ॥
हे नारायन प्रमात्मा हरि । तुमे नवत मैं आदि पुरष वर ॥
तुम मोहि सरजन माहि लगायौ । पै यह रजगुन पाप सु छायौ ॥
तुव सुमिरन मिटवै नहि जैसे । हे प्रभु कृपा करौ तुम तैसे ॥
तव श्रीहरि भागवत जु आहि । करि उपदेस सु बोले ताहि ॥

अपनी सिद्ध हेत यह धारौ। सात दौस विधि हरषि सु भारौ॥
कृष्न प्राप्ति हित कीनौ धारन। सात आवरन भेदन कारन॥
ताही ते भयौ पूरन काम। वितरत नित्य सृष्टि अभिराम॥
विष्नुहु स्वार्थ हेत जाच्यौ हरि। पालन मैं थाप्यौ है जिन करि॥
कर्म ज्ञान करि प्रवृति निवृति सो। ता करि प्रजा पालिहौं मैं सो॥
धर्म बिलाय जायगौ जब जब। करि अवतार थरपिहौ तब तब॥
जे भोगन की इच्छा कैहै। यज्ञादिक कौ फल ताहि दैहै॥
जो विरक्त मोछहि मन धरिहै। पांच प्रकार मुक्ति ताहि करिहै॥
मोछहि हु जे चाहे न अहौ। तिनकौ कैसे पालौ कहौ॥
आपहि अरु लक्ष्मी कौ पाछै। क्यौं करि पालौ कहिए आछै॥
ताहु कही भागवत धारौ। यात सब होय सिद्ध तिहारौ॥
विष्णु हरषि लक्ष्मी संग लानी। मास मास की कथा सु कीनी॥
तब दुष्कर पालन जो आहि। करन समर्थ भयौ सो ताहि॥
विष्णु कथा कौ कहन लगे जब। लक्ष्मी सुनिबे को बैठे तब॥
श्रीभागवत श्रवन है जोई। मास मास में होत है सोई॥
अति सोहै श्रीरमा कहै जब। द्वै द्वै मास सु विष्णु सुनै जब॥
विष्णु रहत अधिकार सु माही। तातै तेसु सुचित है नाही॥
लक्ष्मी हु निश्चित सु जाते। दोय मास होय कथा सु याते॥
सिवहु स्वार्थ हेत जाच्यौ हरि। प्रलै माहि थाप्यौ है जा करि॥
प्राकृत नित्य निमित्त उचारी। प्रलै करन कौ सक्ति हमारी॥
हे प्रभु आत्यन्तिक मो में नाही। तातै बड़ो दुख मन माही॥

बृहस्पति उवाच:-

ताहु हरि सु भागवत दयौ। ताहि सेय तिन तमगुन जयौ॥
वर्ष वर्ष की कथा कही जब। आत्यंतिक लय सक्ति भई तब॥

श्री उद्धव उवाच:-

यह भागवत महात्म सु पाय। हरष्यौ मैं गुरु कौ सिर नाय॥
तब ते विष्णु रीति मैं गही। सेऊ इक मास भागवत सही॥

ताही कर मैं अति सुख छयौ। हरि कौ प्यारौ मीत सु भयौ॥
पुनि हरि नै मौहि व्रजहि पठायौ। जहां निज प्यारिन कौ गन छायौ॥
बिरह दुखित गोपीन कौ चाहि। श्रीभागवत संदेस जु आहि॥
नित हौं जो विहार करि छायौ। तिन मेरे मुख तहां कहायौ॥
ताको तेसु जथा मति पाय। अपनौ बिरह दयौ बिसराय॥
सो रहस्य मैंने नहिं चह्यौ। कछुक चमत्कार तौ लह्यौ॥
निज अस्थान गवन कहि हरिकौ। जब ब्रह्मादि गए निज घर कौ॥
तब श्रीहरि भागवत मझारी। आपहि दयौ रहस्य सुभारी॥
पुन अस्वत्थ मूल बैठे जब। मो में सो दृढ़ करि दीनौ तब॥
ताते व्रज बेलनि में रहै। लोक बद्रिकाश्रम गयौ चहै॥
ताते हम अपनी इच्छा करि। सब ठां सदा रहत है नृप वर॥
अब तौ भक्तनि कौ निरधार। कृष्ण प्रकास भागवत द्वार॥
अब मैं कहा भागवत याते। इन सब कौ होय काम सु जाते॥
पै यह सिद्ध होयगौ तबही। आप सहाय करौगे जबही॥

सूत उवाच:-

विष्णुरात कही सुनि सिरनाय। आपु भागवत कहौ सुख पाय॥
पुन मोकौ आज्ञा दैहौ जो। मैं अपु की सहाय कैहौ सो॥
सुनि उधव प्रसन्न ह्वै कही। अहो कृष्न धर त्यागी सही॥
ताते कलि विघनहि करिहै तब। भली बात बरिबे लैहौ जब॥
कलहि दंड दीजै अपु जाय। मैं इक मास भागवत गाय॥
इनकौ प्राप्त करो लै तहां। कृष्न कौ नित्य धाम है जहां॥

सूत उवाच:—

नृप हरष्यौ चिंता पाई पुनि। निज मत उद्धव सों भाष्यौ सुनि॥
मैं तुम कहे कलहि दंड दैहो। पै भागवत श्रवन क्यौं पैहौ॥
करौ कृपा मोहु पै याते। तुमरी चरन सरन मैं जाते॥
सुनि यह उधव नृप सो कही। अहो तुम चिंता करौ न सही॥
याके आप मुख्य अधिकारी। अबलों कर्म निष्ट नर नारी॥

बात हू याकी जानति नाही। अब या भरतपंड के माही ॥
बहु जन तुमरी कृपा सु पैहैं। श्रीभागवत श्रवन सुख लैहैं ॥
हरि सरूप सुकदेव हैं जोई। तुमे भागवत कहिहैं सोई ॥
तुम हरि नित्य धाम पैहो जब। धर भागवत छाय जैहै जब ॥
तातैं कलहि दंड दीजै पुन। दै परिकर्मा भूप गयौ सुनि ॥
बज्रहू नै प्रतिबाहु जु आहि। अपनौ राज्य दयौ लै ताहि ॥
श्रीभागवत सुननि के हेत। मातन संग तहां कियौ निकेत ॥
पुन गोधन ढिग उधव जु जौ। एक मास भागवत कह्यौ सो ॥
तहा भलकी हरि लीला सोई। है सच्चिदानंदमय जोई ॥
सब हिय भलके कृष्न जु नामे। सबनि अपन पौ देख्यौ तामैं ॥
रास निसानि प्रकासन हारे। है श्रीकृष्नचंद्रमा प्यारे ॥
तिनमें कला प्रभा रूपी जो। देखि अपन पौ तिया चकी सो ॥
पुन प्यारे कौ विरह बिलायो। अपनो नित्य धाम को पायो ॥
औरो तहा हुते जन जिते। नित्य लीला पावत भए तिते ॥
जे व्यवहार माहि जन छाए। बेगही तिनै अदृस्य सु भए ॥
कुंज गाय गोधन वृंदावन। इनमें ते नितही हरिपत मन ॥
कृष्न समेत बिहारहि करें। प्रेमिन ही की दीठ सु परें ॥
सूत उवाच:—
यह हरि जु की प्राप्ति जु आहि। जो जन सुनैरु गावै याही ॥
ताहि कृष्ण की प्राप्ति सु होई। दुखहू बहुर रहै नही कोई ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे भागवत महात्म्ये भाषा रसजानि कृते
तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थ अध्याय

दोहा—कही भागवत श्रवन विधि, या चौथे अध्याय।
श्रोता के लछन कहे, पुनि वक्ता गुन गाय ॥
षषय ऊचुः—
अहो सूत तुम जीवहु भारी। यों ही नित बरनौ सुखकारी ॥

श्रीभागवत महात्म जु आहि। तुमन अपुर्ब सुनायौ ताहि ॥
तास सरूप प्रमान सुनावौ। सुनिबे की पुनि बिधिहि बतावौ ॥
वक्ता कौ पुन लछन कहौ। श्रोता हु कौ लछन अहौ ॥
सूत उवाच: —
श्रीभागवतरु हरि कौ अहौ। रूप सच्चिदानंद सु लहौ ॥
हरि में अटकी जिनकी आसै। तिनको जो माधुर्य प्रकासै ॥
भक्ति ग्यान विग्यानरु मुक्ति। बहुरो इन करि हैं संजुक्ति ॥
माया मीडन निपुन जु आहि। अहो भागवत जानौ ताहि ॥
ना अछर अनंत कौ अहौ। को प्रमान जानै सौ कहौ ॥
दिव्य दर्शन सौं ब्रह्मा को हरि। दीयौ दिखाय चतुश्लोकी करि ॥
अतिहि अवगाह्यौ ताकौ जब। भए विष्न सिव विधि समर्थ तब॥
सुकरु परिछत कौ संवाद जो। मंदमतिनि हित व्यास कीनौ सो ॥
अष्टादस सहस्र जो अहौ। याही भागोत ग्रंथ सो लहौ ॥
कलिजुग ग्रह गृहीत जो आही। सोई परम आश्रै ताही ॥
विष्न कथा के श्रोता अहौ। उत्तम न्यून दोय विधि लहौ ॥
चातक सूवा हंसरु मीन। इत्यादिक उत्तम रस लीन ॥
ऊँट बैल भिड़हा भुरुंड। इत्यादिक हैं नून प्रचंड ॥
और सास्त्र सर सरिता जानौ। स्वांत बूँद हरि ग्रंथ सु मानौ ॥
सबै छोड़ि ताको पीवै जौ। चातक नाम आहि श्रोता सो ॥
सार असार जु ग्रंथन माही। तिनमें जो असार गहै नाही ॥
पय ज्यौ केवल सार गहै जो। हंस नाम श्रोता जानो सो ॥
छीर समुद्र में मीन सु जैसे। रस हित चंचलता तजि तैसे ॥
थिर करि ह्वै रहै सर मैं लीन। मौन साधि सो श्रोता मीन ॥
औरो अरु आछी बोलै जो। सबहि देय सुख सूआ है सो ॥
पगे कथा में जे नर नारी। बोल ताहि दुख देय सु ल्यारी ॥
ज्यौं मृग रहै गान रस छाय। सो तिनको दुख देत कुकाय ॥
सो भुरुंड जु आप न करै। पुनि श्रोतन को सिछा धरै ॥

साहस माकुरु कहि बरजै सो ॥
ज्यौं मुरुंड नाम पंछी जो । डाढ कौ मांस काढ़ि ल्यावै तब ॥
आप तो सिंह जंभान लगै जब । मुनि सब गहै बैल निर्धार ॥
दाखरु भुस ज्यौं सार असार । ऊंट नाम श्रोता जानो सो ॥
मिष्ट त्याग करि कटुक खाय जो । नीब के चरिबे में अनुरागै ॥
जैसे ऊंट आम को त्यागै । औरो बहुत भेद तिन लहौ ॥
उत्तम नून जु श्रोता अहौ । भौंरा गर्दभ आदि अपार ॥
क्रिया स्वभावन के अनुसार । सीस नाय सनमुख बैठे पुनि ॥
तजि सब बाद सुनै हरि के गुन । सिष सौ ह्वै बिस्वासहि करै ॥
निपुन जोरि कर नवनहि धरै । करि प्रश्नहि संदेह निवारै ॥
रहै पवित्र बिचारहि धरै । वक्ता कहत सु श्रोता ताहि ॥
पुन हरि के जन प्यारे जाहि । हरि ही में जिहि मति अभिराम ॥
दीन दयाल सुहृदं निसकाम । मुनीन सनमान्यौ वक्ता सो ॥
चतुर बहुत विधि समझावन जो । सुनिए जो सुख विस्तारै पुनि॥
अब भागवत श्रवन विधि हे मुनि । राजस सात्विक तामस निर्गुन ॥
चार प्रकार श्रवन ताको मुनि । सुनै सीघ्र जो जन हरषात ॥
सुख की ज्यौ श्रम सो दिन सात । बहु पूजा ही की सोभा अति ॥
सो राजस है हे उत्तम मति । श्रम तजि स्वाद सहित सुखरास ॥
एक मास अथवा द्वै मास । सबन आनंद बढ़ावत है जो ॥
श्रीभागवत श्रवन सात्विक सो । सुखद भागवत श्रवन करै नर ॥
एक वर्ष श्रधा आलस करि । तामस श्रवन कहै है ताहि ॥
भूलन सुमिरन जुत जो आहि । आस्वादन समेत करि राग ॥
वर्ष मास दिन नेमहि त्याग । गुणातीत तुम जानो ताहि ॥
श्रीभागवत श्रवन जो आहि । श्रवन भागवत कौ विख्यात ॥
विष्नुरातहु कौ दिन सात । सातहि दिन की आयु ही जाते ॥
सोऊ गुनातीत है याते । श्रवन यथेच्छा निर्गुन मानौ ॥
और हू भाति त्रिगुन है जानौ । जैसे बनै करै त्यौ ताहि ॥
श्रीभागवत श्रवन जो आहि ।

मुक्ति त्यागि हरि चरितन जे जन । चाहत यह पुरान नित कौ धन ॥
जे संसार ताप सो तए । दुखित ह्वै मोक्ष माहि मन दए ॥
कलि में यह भव औषद ताहि । या तन सो अहो सेइयै ताहि ॥
जो जन चहै ज्ञात विषै सब । कर्म सिध यह ताहि देत अब ॥
धन सामर्थ ग्यान बिन अहौ । श्रवन भागवत दुर्लभ लहौ ॥
सोऊ भागवत श्रवन करै जौ । धन जन जस धरादि पावै तौ ॥
यह ठां सबै मनोरथ पावै । अंत समें हरि के पद जावै ॥
या कौ वक्ता श्रोता जो नर । ताहि सेइयै तन धनहु करि ॥
ताते तास श्रवन यह पावै । हरि बिन धन सबही सु कहावै ॥
श्रोता वक्ता द्वै विधि लहौ । हरि कामी धन कामी अहौ ॥
इक विधि के दोऊ होय जौपै । कथा माहि सुख बाढ़ै तौपै ॥
रसाभास होय द्वै विधि माही । फलहु प्राप्त होय पुनि नाही ॥
अै पै हरि कामी जो आहि । होत ढील सो सिधि सु ताहि ॥
धन कामी की सिधि सु अहो । सब विधि पूरन हुए सु लहौ ॥
गुनातीत हरि कामी की पुनि । प्रेम ही उत्तम विधि है हे मुनि ॥
जन सकाम विधि साधै तौलौं । श्रीभागवत पूर्न होय जौलौं ॥
न्हाय कै नित्य क्रिया करि आछै । हरि चरनोदक पीय सु पाछै ॥
पुस्तक की गुर की पूजा करि । कहै सुनै श्रीभागोतहि नर ॥
मौन साध पय भोजन करै । कै हविष्य सो पेटहि भरै ॥
ब्रह्मचर्य धर सयनहि करै । क्रोध लोभ मोहादिक तजै ॥
कथा अंत भजन हि विस्तरै । होय समाप्त जागरन करै ॥
देय दच्छिना द्विजन जिमाय । गुरहि देय पट भूषन गाय ॥
अैसी विधि सो श्रवन करै जब । मन मान्यौ नर फल पावै तब ॥
पै सकामता याके माही । आहि स्वांग सोहत है नाही ॥

दोहा—श्रीप्रियादास रस रास की, पाय कृपा रसजान ।
श्रीभागवत माहात्म की, भाषा करी बखान ॥

इति श्रीस्कंधपुराणे श्रीभागवत महात्म्ये भाषा रसजानि कृते
चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

❀ प्रथम स्कंधः ❀

।। प्रथम अध्याय ।।

दोहा—रसिक भूप हरि रूप पुनि श्रीचैतन्य सरूप ।
हृदै कूप अनुरूप रस, उमल्यौ बहै अनूप ।।

राधा चरन अरुन मन धाऊं । सीस नाय इक बात सुनाऊं ।।
हे राधे सुन बिनती मेरी । कृपा कटाछ जु चाहौं तेरी ।।
तिह कटाछ जल सींचों ताहि । बीज रूप हिय बानी आहि ।।
सब अंग सुंदर मेरी कबिता । सुंदर करो प्रेम रस सबिता ।।
सब कबि कहत बदन छबि ससि सम । अपने मुख सम करो काब्य मम ।।
ससि समान जिन करिहो सजनी । प्रगट कलंक होत जिह रजनी ।।
अर्थ गंभीर करो पुनि ऐसी । नाभि गंभीर बिराजत जैसी ।।
दुरजन जन मन छेदहु ऐसे । प्रीतम हिय द्रिग भेदत जैसे ।।
भाव बढ़ावत दरसन ऐसे । मम कबिता मैं गुन होय तैसे ।।
तुव बियोग मन धर्म मिटावै । ऐसैं काब्य न दोष रहावै ।।
अहो कृष्न गोबिंद बिहारी । बिनती सुनो हमारी प्यारी ।।
तुमे त्रिभंग कहत जन सबै । मत मम काब्य बिगारो अबै ।।
जो पै करो चिकुर सम करो । जिन कर सब जनके मन हरो ।।
ब्यास चरन हे मन सुमरन करि । बिघन बिनासन दुख नासन हरि ।।
त्रिबिध ताप जन जरत बचाए । सक्ति सहित भगवत गुन गाए ।।
श्रीसुकदेव रसिक मन रंजन । नैन बिसाल कमल दल गंजन ।।
सचिकन घूंघरवारी अलकैं । छूटि कपोलनि झांई झलकैं ।।
अधर सुघर गुलाल छबि छीनी । ऊच नासिका सोभा भीनी ।।
उज्जल कंठ तुलसी की माला । तीन संखवत रेख रसाला ।।
सोभा भरे अंग सब ऐसे । भरत भराय ढरै छबि जैसे ।।
रोमावलि तहां यह छबि पाई । मनु हिय हरि सरूप की छांई ।।
रेखा तीन नवीन तहां है । नाभ सरोवर छबि जु महां है ।।
लव बाहु नख सोभा ऐसें । पारजात नव पल्लव जैसें ।।

अरुन चरन सोभा कहो कहा । ता पर नख सोभा भई महा ।।
मानो चंद्र सहित तारागन । श्रीजुत आनि परो परि पायन ।।
कृष्न रूप मद सो मतवारे । चढ़े जात जिन जिननि निहारे ।।
नंद नंदन लीला अनुरागी । जिनके ध्यानहि ओ मति पागी ।।
श्रीचैतन्य रूप मन राखो । तिनसो एक बिनती भाषो ।।
प्रेम बरस सब जगत डूबावो । मेरी हू कबिता आन न्हावावो ।।
श्रीनित्यानंद सुनो वा तिनको । नित्यानंद देहु श्रोतनि को ।।
श्रीप्रियादास चरन मन राखो । पाय चातुरी भाषा भाषो ।।
श्रीहरि जीवन जू की जीवन । जीवन जीवन कहत सजीवन ।।
जो लों कृष्न प्रसाद न पावै । तौ लौं रसना रस ना आवै ।।
श्रीभागवत कल्पतरु अहो । ओंकार तिंह अंकुर लहो ।।
कृष्न हृदै धरनी रस रूप । भक्ति थावरे बढ़ो अनूप ।।
ताकी द्वादस गुदिया भारी । पैसठ घाटि चार सै डारी ।।
अष्टादस सहस्र पल्लव करि । मन कामन पूरवक सरबोपरि ।।
सास्त्र पुरानरु बेद बनायो । ब्यास हिये संतोष न पायो ।।
तब नारद उपदेसहि पाए । भगवतगुन बरनन के चाए ।।
प्रारंभत भागवत पुरान । करत मंगलाचरन सुजान ।।

दोहा—प्रथम मंगलाचरन छह सौनक प्रश्न बखान ।
आदर करिके सूत को प्रथम ध्याय यह जान ।।

ब्यास उवाच—
जग उपजावै पालै दहै । ब्यापक ह्वै न्यारौ पुनि रहै ।।
जिन हिय करि बिधि बेद पढ़ायो । जामे मोह बड़नि हूँ पायो ।।
स्वप्रकास सर्बग्य बिराजत । जाते झूठो सांचो लागत ।।
माया रचित जगत यह ऐसे । मृग मरीचक को जल जैसे ।।
कपट रूप माया जो आहि । अपने तेज बिडारी ताहि ।।
ऐसो सत्य जु ईस्वर आहि । हम सब ध्यान करत हैं ताहि ।।
अति सुंदर भागवत पुरान । श्रीनारायन कियो बखान ।।

मुक्ति प्रजंत त्याग फल जामें। अैसो परम धर्म कहो तामें ।।
निर्मत्सर जाके अधिकारी। तीन ताप जड़ नासक भारी ।।
मंगल फल को दाता भारी। प्रेम तत्व बर्नन सुखकारी ।।
और ग्रंथ जो पढ़ै विचारै। तो कहा हरि हिय बेग पधारै ।।
यामें होय श्रवन इच्छा जब। हिय हरि मूरति आन छवै तब ।।
फल रस रूप भागवत नाम। बेद लता लागो अभिराम ।।
परमानंद रूप रस भरौ। सुक मुख ते धरनी परि परौ ।।
अहो रसिक शृंगार उपासक। पान करो यह मुक्ति भए तक ।।
नैमिषार मैं सौनक जिते। यग्यारंभ करत भए तिते ।।
वर्ष हजार नियम करि लियो। भगवत प्राप्ति मांहि मन दियो ।।
इक दिन अगन होम करि मुनि सब। आदर करि सूतहि पूछी तब ।।

ऋषय ऊचुः—

हे निष्पाप सूत सुखकारी। बड़ी आरबल है जु तिहारी ।।
श्री मुनि ब्यास सबन के स्वामी। शब्द ब्रह्म के पारंगामी ।।
धर्म शास्त्र इतिहास पुरान। जानत जो जो ब्यास सुजान ।।
तुम सब पढ़े कृपा तिन कीते। पुनि ब्याख्या जु करी तिन कीते।।
अरु जो मुनिवर जानत सबै। सो तुम सब जानत हो अबै ।।
जात सनेही सिष्य जु आहि। गुह्य ते गुह्य कहत गुरु ताहि ।।
इनमैं जो कल्यानहि लह्यो। अहो सूत सो हम सो कहो ।।
या कलिजुग में हैं जन जिते। आयु छीन बुधि छीन हैं तिते ।।
महामंद भागन करि मंद। रोगन करि ब्याकुल दुख द्वंद ।।
नाना कर्म जुक्ति जे ग्रंथ। जोग्य है पुरुष चलन तिंह पंथ ।।
याते जो ग्रंथन मैं सार। बुद्धि भ्रमर करि करि उद्धार ।।
श्रद्धा जुत हम सब सो कहो। जाते मन प्रसन्न होय अहो ।।
ये हरि भक्तन के पालक नित। प्रगट देवकी ते भए जा हित ।।
अहो सूत सो सब तुम जानो। श्रद्धा जुत हम सों सु बखानो ।।
हरि को जनम जनम सुखदाई। रसदाई दुख को सुखदाई ।।

जो नर घोर नरक में परो। ब्याकुल कृष्न नाम उच्चरो ।।
सो नर तुरत जगत छिटकावै। कृष्न नाम ते भै भै पावै ।।
हरि चरनन आश्रित भए जिते। परम सांति में डूबे तिते ।।
परसि करे ते सुद्ध सु अैसें। गंगाजल को सेवन जैसें ।।
अति पवित्र हरि को जस आही। नारदादि मुनि गावत ताही ।।
चहिए हिय उज्जलता जाको। अैसो कौन सुनै नहि ताको ।।
लीला करि अनेक अवतार। प्रगट करै हरि कर्म उदार ।।
गावत रसिक सदा तें अहो। श्रधा जुत हम सों तुम कहो ।।
अरु हरि अवतारन की कथा। सुंदर बरन सुनावो जथा ।।
जो हरि स्वेच्छा माया करिकै। लीला करै महा मुद भरिकै ।।
कृष्न चरित्र सुनत हम सबै। इंद्री तृप्त न पावत अबै ।।
जिनको सुनत रसिक जन जिते। पद पद स्वाद लहत है तिते ।।
नर सरूप धरि रूप छिपायो। हरि बलदेव महा सुख पायो ।।
सुंदर चरित किए हरि जे जे। हम सों बरनन करिए ते ते ।।
अरु हम कलिजुग आयो जानि। विष्न छेत्र में बैठे आनि ।।
हरि की कथा श्रवन मन भई। ताते जग्य प्रतिग्या लई ।।
धीर्य हरैया कलुजुग आहि। अहो हम तरो चाहत हैं ताहि ।।
ताते तुमे मिलाए प्रभु यों। सिंधु माहि डूबत मल्हा जो ।।
धर्म कवच ब्रह्मन्य ईस सब। सो हरि जू अप्रगट भए जब ।।
तब यह धर्म सरन किह गयो। कहो सूत तुम हरि मन दयो ।।

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
प्रथमोऽध्यायः ।। १ ।।

।। द्वितीय अध्याय ।।

दोहा—प्रथम ध्याय में प्रश्न छह सौनक किये बखान ।
तामे उत्तर चार को दुतिय ध्याय यह जानि ।।

ब्यास उवाच—

भयो मोद सौनक बानी सुनि। श्लाघा करत सूत बोले पुनि ।।

सूत उवाच—

जिनको संस्कार नहीं भयो। नौ गुन रहित संन्यासहि लयो ॥
लै संन्यास सु बन को चले। तिनके बिरह ब्यास कलमले ॥
अहो पुत्र अहो पुत्र पुकारे। तिनकी ओर न नैंकु निहारे ॥
तरु में पैठ दियो उत्तर फिर। ता श्री सुक को मैं नावत सिर ॥
भव समुद्र अग्यान जु आहि। जे नर तरो चहत हैं याहि ॥
तिनको प्रेम भक्त दाता इक। बेद सार पुनि तत्व प्रकासिक ॥
श्री भागौत जु गुह्य पुरान। करुना करि मुनि कियो बखानि॥
अैसे ब्यास सुवन सबके गुर। तास सरन है सूत पंगनि धुर ॥
देवी सरस्वती नारायन। बंदि निरोत्तम के पुनि पायन ॥
जै सरूप भागौत पुरान। तब बखान नर करै सुजान ॥
हे मुनि श्रेष्ठ सबै तुम याते। लोकनि मंगल पूछौ जाते ॥
कृष्न चरित्र प्रस्न तुम करी। जाते मन प्रसन्नता भरी ॥
नर को धर्म श्रेष्ठ है सोई। जाते भक्ति कृष्न मैं होई ॥
बिघन रहित कामन तें रहै। जाते मन प्रसन्नता लहै ॥
भक्ति जोग हरि में जु लगावै। सो बैराग ग्यान उपजावै ॥
सुंदर धर्म बनाय कियो नर। बावन तोले पाव रती कर ॥
जो हरि कथा रति न उपजावै। तौ केवल श्रम सबै कहावै ॥
धर्म जु मुक्ति हेत है जाको। धन फल योग्य नाहिनै ताको ॥
जो धन हरि सेवा को जोग। ताको फल कछु बिषै न भोग ॥
इंद्री मोद तास फल नाहीं। जौं लौं जीवै तौं लौं आहीं ॥
जीवन को फल तत्व ध्यायबौ। कर्मन करि नहि स्वर्ग जायबौ ॥
अद्वयग्यान नाम है जाको। तत्व नाम तत्वबित कहे ताको ॥
कोई ब्रह्म कोई भगवान्। कोई परमात्मा करै बखान ॥
कथा श्रवन करि भई जु भक्ति। ग्यान बैराग दोऊ करि जुक्ति ॥
ता कर श्रद्धा सहित जिते मुनि। देखत ता तत्वहि हिए में पुनि ॥
ताते जिते धर्म हैं द्विज बर। तिनको फल इक है तोषन हरि ॥

ताते द्विज हरि भक्तनि के पति। नर कों नित तामें करिबै रति ॥
तिनकी कथा ध्यान पूजन पुनि। नित ही करन जोग जन हे मुनि ॥
जाके ध्यान खड़ग कों गहि करि। कर्म गाठ काटन प्रबीन नरि ॥
जाकी कथा सुखहि बिस्तरै। तामें कहो कोन रति करै ॥
अति पवित्र तीर्थ सेवै जब। साधु समागम नर पावै तब ॥
ताते कृष्न कथा के मांही। होय प्रेम मुनि संसै नाही ॥
भक्त सु हृदै हरि मंगलकारी। जिनकी कथा देह सुख भारी ॥
जो नर सुनै पैठि हरि ता हिय। काम बासना दूर करत जिय ॥
अैसी श्री भागौत श्रवन ते। होत अमंगल नष्ट सु मन ते ॥
तब उत्तम जस श्रीभगवान। तामें रति होय गाढ़ महान ॥
तमो रजोगुन तें जे भए। काम लोभ चित में ह्वै गए ॥
छूटि तिनों सो सतोगुनी चित। हे मुनि होय रहै प्रसन्न नित ॥
अैसे भगवद्भक्तिहि पाय। जाको मन प्रसन्न ह्वै जाय ॥
ताको सब संगहू छूटि जावै। कृष्न तत्व को अनभौ पावै ॥
नर अपनें हिय हरि देखै जब। हृदै गांठि बिंद जाय सबै तब ॥
संसै जिते तिते कट जावै। पुनि सब कर्म नास को पावै ॥
याही तेज परम प्रबीन। परम मगन तासै ह्वै लीन ॥
बासदेव श्रीहरि में नित्त। करै भक्त सोधै जो चित्त ॥
सत रज तम ये माया के गुन। परम पुरुष इन सहित होय पुनि॥
थित उत्पति लय इच्छा करी। हरि सिव बिध त्रय मूरति धरी ॥
तिन में सत्व मूर्ति हरि जोई। ताते नर को मंगल होई ॥
मुख्य काष्ट ते धूमा जैसें। ताते अगन बेद में जैसें ॥
श्रेष्ठ सबन ते जानो सतगुन। जाते होत ब्रह्म दरसन मुनि ॥
याही तें पहिलै सब मुनि बर। भजे बिसुद्ध सत्व मूरति हरि ॥
तिन मुनि मुखियन जो अनुसरै। सोऊ जगत को मंगल करै ॥
जो कोई या संसारहि तजै। सो नर सांति मूर्ति को भजै ॥
घोर रूप जे पति भूतन के। निंदा छोड़ि त्याग करि तिनके ॥

रज तम में सुभाव है ताको। सुत संपति प्रभुता मन जाको॥
निज समान सों पित्ररु प्रेत। प्रजा पतिन को भजत सहेत॥
जग्य जोग अरु बेद जु कर्म। ग्यान तपस्या गति पुनि धर्म॥
हे सौनक औरौ हैं जिते। बासुदेव पारायन तिते॥
सोई निरगुन श्रीभगवान। जाकी महिमा कही बखान॥
प्रकृति कार्य कारन गुन मई। ता कर जग रचना निरमई॥
गुन मय वस्तु रची माया करि। तिनमैं धसि भासत ऐसे हरि॥
जैसैं कोऊ होय गुनवान। तहूँ दिए पै करि बिग्यान॥
ज्यो काठनि में एक अग्नि जो। नांनां भांति प्रकास करै सो॥
त्यौं सर्वातम ईस मुरारी। करै प्रकास सु सबन मंझारी॥
पंचभूत तन मात्रा हे मुनि। मन समेत ग्यारह इंद्री पुनि॥
इन करि सब जग आप बनावै। करि प्रवेस पुनि भोग भुगावै॥
यों हरि जग के सिरजन हार। करि सु प्रेम लीला अवतार॥
सुर नर पसुनि मांहि बपु धरै। सतगुन करि जग पालन करै॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

तृतीय अध्याय

दोहा–पुरषादिक अवतार को चरितन सहित बखान।
ताही करि मुनि प्रश्न को उत्तर तीजै जान॥

सूत उवाचः–

पहले सृष्ट करन भगवान। पुरुष रूप को गह्यौ सुजांन॥
महदहंकाररु तनमात्रा जुत। एकादस इंद्री करि अद्भुत॥
तिह हरि सैन जलन में करी। जोगनींद नैनन में भरी॥
विस्व सृजन को पति विधि जोई। नाभिकमल ते प्रगट्यौ सोई॥
जा हरि को सरूप सुखकारी। सुद्ध सत्व तेजोमय भारी॥
जाके जिते अंग हैं मुनिवर। लोकनि की रचना है नित करि॥
ता हरि को सरूप मंगल करि। जंघा चरन बदन सहसनि करि॥

नासा नैन कर्न सिर राजै। कुंडल मुकट अनेक बिराजै॥
जिते बिबेकी मुनिवर आही। ग्यान नयन करि देखें ताही॥
हरि के सब अवतारन को मुनि। यह आश्रै अरु बीज अछै पुनि॥
तिनके अंस अंस पुनि तिन करि। निस दिन होत रहति पसु सुर नर॥
सो हरि प्रथम भए सनकादिक। दुस्चर ब्रह्मचर्य औपासिक॥
दूजै हरि सूकर बपु धरौ। सब लोकन को मंगल करौ॥
गई रसातल धरनी जोई। ल्याए काढि अहो मुनि सोई॥
तीजै हरि नारद ह्वै गाई। पंचरात्र जहां कर्म घटाई॥
चौथे धर्म तिया अभिराम। प्रगटे नर नारायन नाम॥
दुस्चर सांत तपस्या जोई। जग के सुख को कीनी सोई॥
भए पांचवें कपिल सिद्धवर। सांख्य सास्त्र भयो नष्ट काल करि॥
जामें तत्व समूह जु आहि। कहो आसुरी रिष सों ताहि॥
अत्रि पुत्र करि जब हरि बरै। दत्तात्रेय छटै अवतरै॥
अलरक अरु प्रह्लाद महान। इनसों बरन्यो आतम ग्यान॥
रुचि तें आकूती में भए। जग्य नाम अवतार सुनिए॥
मिलि निज सुत देवन के गन हरि। पाल्यो स्वायंभू मन्वंतर॥
नाभि की तिया मेरु देवी करि। भए तामें आठवें रिषभ हरि॥
परमहंस धीरनि को जो मग। ताहि दिखायो अति दुस्तर जग॥
जब सब रिषिन प्रार्थना करी। नवें देह तब पृथु की धरी॥
हे मुनि यह कमनीय सु यातें। धर ते दुही औषदी जाते॥
चाछुष मन्वंतर जब भयो। दसवो मत्स रूप हरि लयौ॥
पुन धरनी नौका करि करी। वैवस्वत मनु रछा करी॥
सुर असुरन मिल समुद्र मथ्यौ जब। मंद्राचल जल धसन लग्यो तब॥
एकादसो कछप बपु लयो। मंद्राचलहि पीठ पै लयौ॥
भए बारहें श्रीधन्वंतरि। बहुरि मोहिनी रूप धरौ हरि॥
असुरनि को जु मोह उपजायो। अमृत सबै सुरन को प्यायौ॥
चौदहां श्रीनरसिंह बपु धारयौ। नखन हिरन्यकस्प उर फारयौ॥

फारत जात तृनन को तैसे ॥
करत चटाई को नर जैसे । बलिके जग्य मांहि चलि गए ॥
पंचदसें बामन हरि भए । नाप त्रिलोकी लई छिनाय ॥
तीन पैड़ धर मांगी जाय । मुनि द्रोपी राजानि देखि करि ॥
भए सोरहें परसराम हरि । ताकर धरनी भार उतारे ॥
बेर इकीस तबै नृप मारे । सत्यबती में परासुर तें ॥
भए सत्रहें ब्यास सु हरि ते । करी बेद द्रुम की साखा तब ॥
छीन बुद्धि प्रानी देखे जब । सिधि करन देवन के काम ॥
भए अठारहें राजा राम । औरों किए पराक्रम किते ॥
बारिधि निग्रहादि दे जिते । राम कृष्न अवतार जु दोई ॥
भए जादवन में हरि सोई । भक्त जनन को सुख बिस्तारो ॥
सबै धरनि को भार उतारो । आंजिन सुत बुध ह्वैहै तबै ॥
कलिजुग मुनि बरतेगा जबै । असुरन के मोहन कों भारी ॥
प्रगटे कीकट देस मझारी । तब कलि अंत प्रगटहैं जगपति॥
चौर प्राय जब ह्वैहैं नरपति । बिष्नजसा बास के धाम ॥
बाईसें कल्की करि नाम । तातें होय अवतार सु अनगन ॥
हे मुनि सुद्ध सत्वमय भगवन । बहुत नदी नद कबहुँ न घटे ॥
ज्यूं जल पूरन सर ते प्रगटे । मनु सुत सबै हरि कला तिते ॥
रिषि मुनिदेव प्रजापति जिते । कृष्न स्वयं भगवानहि सोई ॥
कोई अंस कला हरि कोई । तब तब प्रगटि सुखन बिस्तरै ॥
ब्याकुल लोक असुर जब करै । होय पवित्र भक्ति जुक्त नर ॥
हरि के जनम गुह्य हे मुनिबर । सो सब दुखनि ते छुटि जाय ॥
सांझ सबेरै कहे सुनाय । तिह सामान रूप जिन लहो ॥
जीव ग्यान मय सुद्धि है अहो । माया के गुन कर सो करो ॥
अस्थूल सरीर जीव मैं धरो । पवन मांहि पुनि जैसे रजकन ॥
नभ में जैसे मेघन के गन । द्रष्टा जीव मांहि देही त्यों ॥
अग्यानिन ब्यापित कीन ज्यों । गुनन रचित कर बरनन जामें ॥
और अलख इक लिंग तन तामें ।

अति सुच्छम उपाधि कारन मुनि । जाते जन्म होत यह पुनि पुनि ॥
कारज कारन रूप जु द्वै ये । रचित अविद्या करि जिय में ते ॥
होइ निवृत ग्यान करि जबै । दरस ब्रह्म को पावै तबै ॥
जब माया विद्या तें नासै । जीवहि सो स्वरूप तब भासै ॥
पूरन सुद्ध ज्ञान के सो मुनि । रमै रूप परमानंद में पुनि ॥
कर्म अकर्ता के जे अहो । जन्म अजन्मा के ते लहो ॥
अंतरजामी हरि के तेई । बेद रहस्य कविन कहे जेई ॥
अति अमोध लीला है जाकी । अहो सदा स्वतंत्रता ताकी ॥
थिति लय जन्म बिस्व के करै । तिनमें चिंता सक्ति न धरै ॥
अंतरजामी षट इंद्री पति । बिषै दूर ते गहत गंधवत ॥
मन बानी करि रूपरु नाम । बिस्तारति जग करता राम ॥
ता हरि की लीला मुनि जिती । नर कुबुद्धि जानै नहीं तिती ॥
ता चतराई करि करि ऐसें । नट आचरन अग्य नर जैसे ॥
जो कोई नर हरिपद भजे । नित्य निरंतर कपटहि तजे ॥
सो जग करता चक्रपान की । पदवी जानै रस सुजान की ॥
हे मुनि तुम सो दूजो नांही । मनकी व्रति धरी हरि माहीं ॥
जाते जन्म मरन दुख रूप । पुनि पुनि होत नांहि द्विज भूप ॥
यह पुरान भागवत नाम मुनि । बेद तुल्य दाता धन के पुनि ॥
हरि के चरित जटित सुखकारी । ब्यास कहो जग मंगलकारी ॥
भारत अरु बेदन को सार । सबै ब्यास जू कियो उधार ॥
करिकै मुनि श्रीसुकहि पढ़ायो । ग्यानवान में श्रेष्ठ जु गायो ॥
सो श्री सुक भागौत पुरान । कहो परीछत सों जु बखांन ॥
जब राजा रिषि राजन संघट । आसन लै बैठे गंगातट ॥
धर्म ग्यान दोऊ सहित जबै हरि । अंतरहित भए तब कलिजुग करि॥
नष्ट भयो जिनको द्रग ग्यान । तिनें उयो यह सूर्य पुरान ॥
हे सौनक श्रीसुक द्विजराज । कहत भए नृप सभा बिराज ॥
मैं हो तहां सुननि मुनि गयो । श्रीसुकदेव अनुग्रह भयो ॥

बुद्धि समान पढ्यौ मैं जैसें। हे मुनि तुम सों कहिहो तैसे ॥
इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
तृतीयोऽध्याय:॥ ३ ॥

चतुर्थ अध्याय

दोहा—तप ग्रंथादिक मुनि हिये किये बहुत जब दाह।
तब भागवत बखान किये चौथे यह अवगाह ॥

व्यास उवाच:-
ऐसै कही सूत जूं जबै। अस्तुति करत भए मुनि सबै ॥
सब में मुख्य वृद्ध कुलपति मुनि। रिगबेदी बोले सौनक मुनि ॥
सौनक उवाच:-
हे महाभाग सूत हे सत्तम। सब वक्तनि में तुमही उत्तम ॥
पुन्य कथा जु भागवत अहो। मुनि ने कही सु हम सों कहो ॥
कौन काल स्थान कौन पुनि। कौन हेत प्रेरयौ हो किह मुनि ॥
संमद्दक भेद बुद्धि नहिं जिनकी। मति एकाग्र सदा है तिनकी ॥
माया नींद कभूं नहिं पगै। श्रीसुक गूढ़ मूढ़ से लगै ॥
जब सुक नग्न बिपिन को चले। पाछे लगे व्यास कलमले ॥
देव तिया जल न्हातहीं जिती। व्यासहिं लखि लज्जित भई तिती॥
दौरि सबन झट दै पट लए। लखि मुनि तिन सों पूछत भए ॥
अहो देव तिय श्रीसुक जोई। नगन जात तुम देखें सोई ॥
तब तुम नेंकु न लज्जित भई। अब यह रीत कहा गहि लई ॥
तब सब तियनि व्यास सों कही। भेद दृष्टि हम तुमरी लही ॥
यह नर यह तिय तुम मुनि जानो। भेद दृष्टि मति सुक में आनो ॥
कुरु जंगल देसन में बसै। आय हस्तनापुर जब निकसें ॥
मूक मत्त जड़ से सुक मुनिवर। पहचानत भए कैसें पुर नर ॥
बहुरो बिष्नुरात राजा सों। पांडो बंस प्रगट है तासों ॥
कैसें सुक संबाद जु भयो। जामें उदे भागवत लयो ॥
श्रीसुक जा गृहस्थ घर जांहि। गो दोहन लगि तहां ठहराहि ॥

एहो महाभाग श्रीसुक मुनि। करत तीर्थ से गृह तिनके पुनि ॥
सुत अभिमन्यु परीछत राजा। महाभागवत सुख के काजा ॥
तिनको जन्म बड़ो आश्चर्ज। उनके कर्म कहो नरवर्ज ॥
पांडू बंस के मानस बर्द्धन। सब धरनी के राजा नृप मनि ॥
कौन हेत तज संपति दुर्घट। अंसन लै बैठे गंगा तट ॥
जा नृप के चरनन सिर नावैं। सुख कौ बैरी धन बहु ल्यावैं ॥
सो नृप दुस्तज संपति प्रांन। जुवा समे त्यागे कहा जान ॥
हरि परायन जन है जोई। देह हेत जीवै नहीं सोई ॥
लोकन देंन द्रव्य कल्यानि। धारत देह भक्ति रस जानि ॥
पर उपगारी तन यह अहो। है उदास छोड्यौ क्यौं कहो ॥
अहो सूत यह पूछी है जो। सर्वश्रेष्ठ हमसो कहिए सो ॥
बेद बिना है जितने ग्रंथ। तुम सब तिनके जानत पंथ ॥
सूत उवाच:-
तीजो द्वापर जब मुनि भयो। जन्म व्यास जू ने तब लयो ॥
सत्यवती में पारासर तें। बेद व्यास प्रगटे श्रीहरि तें ॥
एक समें मुनि व्यास अहो मुनि। न्हाय सरस्वती है पवित्र पुनि ॥
नभ में भयो उदै सूरज जब। इकले मुनि इकांत बैठे तब ॥
भूत भविष्यत सब जानति मुनि। सफल बिचार होत तिनको पुनि॥
जाकी गति नहीं जानी जाय। भए असें जे कालहि पाय ॥
जग के धर्म व्यतीक्रम सबै। देखत भए व्यास मुनि तबै ॥
पुनि तिन काल सु जुग जुग भीतर। सक्तिहीन अल्पायु किये नर ॥
दुष्ट बुद्धि सत्या करि हीन। श्रद्धा रहित अभागी दीन ॥
दिव्य नैन करि श्री मुनि व्यास। लखि अैसे नर भए उदास ॥
तब बर्नाश्रम को जो प्यार। श्रीमुनि मन मैं कियो बिचार ॥
चातुर्होत्र कर्म है जोई। प्रजा सुद्ध को देख्यौ सोई ॥
तब मुनि जग्य पढ़न में मन दै। एक बेद के चार किए लै ॥
स्याम अथर्बन रिग जजु चार। बेद व्यास मुनि किए उधार ॥

भारत और पुरान जु आही। बेद पांचवो जानों ताही॥
पढ्यो पैल रिग बेद सुनाम। कवि जैमन गायो श्रुति स्याम॥
वैसंपायन है इक जोई। जजुर बेद में निपुन है सोई॥
नाम अंगरा साखा जामें। बेद अथर्वन है मुनि तामें॥
भए निपुन सुमंतु निर्इ मुनि। भारत और पुरान जिते पुनि॥
तिनमें निपुन पिता मम जोई। नाम रोमहर्षन है सोई॥
तिन तिन रिपिन सु अपने बेद। तिनके किए अनेक सुभेद॥
तिनके सिष्य असिष्य सु मुनिबर। बेद वृछ साखा भई तिन कर॥
व्यास दीन बत्सल सुखकारी। सुगम बेद साखा बिस्तारी॥
जैसे अलप बुद्धि नर जानै। असे बेद सुगम कियो तानै॥
बेद सुननि को जोग्य न तीन। सूद्र स्त्रीरु द्विजन में हीन॥
मंगल कर्म अजोग जिते नर। तिनको मंगल ब्यास हिए धर॥
भारत कर ब्याख्या बिस्तारी। जीवन ऊपर दया बिचारी॥
हे सौनक असे जु ब्यास मुनि। पुन्य सरस्वती तट बैठे पुनि॥
सब प्रकार जग हित मन दयो। तऊ हिरदै संतुष्ट न भयौ॥
अप्रसन्न मन ब्यास धर्मवित। बैठि इकांत बिचार कियो चित॥
पुनि मुनि मन में बोलत भए। अहो मैं ब्रत अनेक करि लए॥
बेद अगिन गुरु पूजा करी। अरु तिनकी आग्या मन धरी॥
अरु भारत मिस करि मैं गायौ। सब बेदन को अर्थ दिखायौ॥
जा भारत में नीच नारि सब। अप अपने धर्महि देखत अब॥
तौऊ पूरन मम जिय है जो। ब्रह्म तेज करि श्रेष्ठ महा सो॥
सोऊ स्व स्वरूप करि अहो। पूरन रहित सो भासति लहो॥
अथवा धर्म भागवत जिते। हरि भक्तनि को प्रिय हैं तिते॥
वेई अच्युत हूँ को प्यारे। ते मैं आछे नाहि उचारे॥
असें जान अपन यो हीन। पुनि मुनि बहुत भए दुख लीन॥
तब नारद तिनके घर आयौ। सरस्वती के तट जो गायौ॥
देवन करि पूजित नारद मुनि। आए लखि के उठे ब्यास पुनि॥

जथा जोग लै पूजा करी। श्रीरस जांनि सांति रस धरी॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

पंचम अध्याय

दोहा—सब धर्मन ते श्रेष्ठ हरि, गांन पांचवें जांनि।
ब्यास चित्त संतोष को, नारद कियो बखांनि॥

सूत उवाचः—

बहु जस कर बीना अभिराम। देवन में रिष नारद नाम॥
सुख करि ढिग बैठे जु ब्यास मुनि। तिनसों हस बोले नारद पुनि॥

नारद उवाचः—

हे महाभाग पुत्र पारासर। हम सों कहो अहो यह मुनिवर॥
है संतुष्ट तुम्हारो चित्त। और सरीर कुसल सो मित्त॥
जानन जोग धर्म है जिते। अहो ब्यास तुम जानें तिते॥
जाते सब अर्थन जुत है जो। अद्भुत भारत तुमनि कहो सो॥
और सनातन ब्रह्म जु आहि। जानो ताहि मिलै पुनि ताहि॥
तऊ अकृतार्थ से तुम पुनि। सोचति क्यों सु अपन पे को मुनि॥

ब्यास उवाचः—

यहो अगाध बोधि बिधि तात। हे मुनि नारद सुन मोहि बात॥
जो तुम कहो सु सब मो मांही। तऊ संतुष्ट चित्त मम नाही॥
याको कारन मैं नहीं जानौ। ताते नारद तुम ही बखानौ॥
हे मुनि नारद गुह्य जु आहि। तुम सब नीके जानति ताहि॥
और अनाद पुरष है जोई। कारज कारन ईस्वर सोई॥
मन करि गुन द्वारा जग रचै। पालै हरै सबन सों बचै॥
ता हरि की तुम सेवा करी। जानत बात दुरी हू खरी॥
हे मुनि नारद सूरज जैसें। फिरत त्रिलोकी में तुम तैसें॥
फिरत पौन से तुम सब में मुनि। नरन की बुद्धि वृति जानत पुनि॥
शब्द ब्रह्म परब्रह्म मंझारी। ब्रतरु धर्म करि निपुन हो भारी॥

तातें तुम नारद मुनि अहो। हमरी जो घटती सो कहो॥
नारद उवाचः—
अहो व्यास उज्जल हरि जस सों। करि विसेष बरन्यौं नहीं तुम सों॥
जा करि हरि संतुष्ट न होई। महा तुच्छ हम मानत सोई।
अहो व्यास मुनि श्रेष्ठ सबन ते। ज्यों धर्मादि किए बरननि ते॥
त्यौ हरि के चरित्र सुखकारी। बरने नांहि कियो दुख भारी॥
सुंदर पद रचिना है जा में। जगत पवित्र न हरि जस तामें॥
तो वह काव्य गरत जूठन को। बिपई कागनि के सुर मन को॥
परब्रह्म रमनीय सु आही। कमल समूह सु जानो ताही॥
तामें परमहंस नित रहै। काग गरत दिसि नेकु न चहै॥
जा में अलंकार नही छंद। अरु पर कृष्न चरित्र सुखकंद॥
हरि के नामन को बरनन पुनि। सो जग को अघ नासक है मुनि॥
साधु हू ताही काव्यहि सुनैं। गावै अरु ताही को गुनैं॥
निरमल ब्रह्मज्ञांन मुनि जोई। हरि के भाव बिना जो होई॥
जदिप कर्म नहीं जा माही। तऊ व्यास अति सोहति नांही॥
सदा अमङ्ग काम कर्म मुनि। अरु निषकाम कर्म जो है पुनि॥
ते जो हरि अर्पित नहि करै। तौ कहौ सोभा कहा ते धरें॥
हे महाभाग पुन्य जस करी। सफल बुद्धि व्यास ब्रह्मधरी।
सत्य मांहि रति आहि तिहारी। सब बंधनि की काटनि हारी॥
हरि की लीला बरनन करौ। चित्त वृत्त एकाग्रह धरौ॥
हरि के चरित छोड़ि मुनि व्यास। और कछु बरनन की आस॥
ता बरनन के नाम रूप करि। मति बिछिप्त होत तिंह छिन नर॥
ताकी मति कहूँ टिकै न ऐसे। बड़ी पौन सों नौका जैसे॥
हे मुनि जे सकाम कर्मादिक। तिनमैं नरासक्ति सोभाविक॥
पुन तुम तिने धर्म करि धरयौ। यह तो अति अनर्थ लै करयौ॥
अब नर तेरी सांची बानी। मान तिही में थिरता ठांनी॥
अरु जो साध निवारन करै। तिनकी बात कान नही धरै॥

जाकी महिमा को नही पार। ऐसे हरि ईस्वर सुख सार॥
ताको रूप निवृत्ति मारग करि। जोग्य जानवे को सु साधु नर॥
ताते तन अभिमानी नर को। करि मुनि चरित सुनावो हरिको॥
जिन अपने धर्महि छिटकायो। हरि के चरनन में मन लायो॥
बिनही सिद्ध भजन तन तास। जो पै छुटि गयो हे व्यास॥
बहुरो नीच जोनि में गयो। तौ कहा तास अमंगल भयो॥
जिन हरि बिन सब धर्म बनाए। ताने कहो कहा फल पाए॥
ऊपर नीचे फिरत जिते पुनि। तिनको जो नही प्राप्त होत पुनि॥
जाको जतन साधु सब करै। सुखनि मांहि ते मन नही धरै॥
बिना जतन दुख आवै जैसें। सुखौ काल करि आवै तैसें॥
हे मुनि हरि सेवा जो करै। सो तौ नीच जोन में परै॥
तऊ न जग में भरमें ऐसें। कर्म निष्ठ नर भटकै जैसें॥
सो वह साधु नीच तन पाए। भक्ति सुधा रस बस ह्वै जाए॥
ह्वै बसि हरि चरनन मन धरै। फेरि छोड़िबे कों नही करै॥
जग की थिति लय जनम करै जो। बिस्व रूप यह है ईस्वर सो॥
पुनि जग ते न्यारो जो आहि। तुम मुनि नीके जानत ताहि॥
तामें तुमें दिखायो ऐसे। दिग दरसन कराइए जैसे॥
सफल बुद्ध हे व्यास महा मुनि। परमातम जगदीस कला पुनि॥
जग के मंगल में मन दियो। होय अजन्मा जन्महि लियो॥
ताते आयो करिके आप। देखो अहो देहु तजि ताप॥
जो हरि को प्रभाव अति ही मुनि। ताके चरित करो बरनन पुनि॥
तब पांडित्य जग्य सुभ कर्म। बानी बड़ी बुद्धि अरु धर्म॥
सबको जु अखंडित यहै। हरि के चरितन को नित कहै॥
पहल जनम माहि हौ हे मुनि। रहो द्विजनि को दासी सुत मुनि॥
इक दिन तिनके हरिजन आए। बरषा रितु में तिने छवाए॥
बिप्रन मोहि अनूपम मांनि। साधु टहल में राखौ जांनि॥
मै हूँ तिनकी सेवा करी। सावधानता हिए मैं धरी॥

तब सम दृष्टि साथ सब मोह पर। कीनी कृपा जानि सर्वोपर॥
मै हूँ इंद्रीजित मित बानी। रहो चपलता सब छिटकानी॥
अरु जब हरिजन अग्या देंहि। तब हम तिनकी जूठनि लेंहि॥
सोऊ एक बेर पाई हम। ताते भए बिनास पाप तम॥
जब ऐसें सेवा मन द्यो। तब मेरो चित उज्जल भयो॥
तब उन साधुन के धर्मन में। हे मुनि उपजी रुचि मो मन में॥
ते सब कृष्न कथा मन हारी। मिलि गावैं हे मुनि सुखकारी॥
तिनकी कृपा भई हम पै मुनि। सरधा करि में सुने कृष्न गुन॥
जा हरि को जस प्यारो है अति। तामें मेरी होत भई रति॥
जब रुचि कृष्न कथा में भई। तब दृढ़ मति हरि मैं लगि गई॥
थूल सूछम तन में माया करि। कलपित देख्यो ब्रह्मरूप हरि॥
चार मास साधुन गायो जो। उज्जल हरि जस हमन सुनो सो॥
तब मेरे हिए भक्ति भई मुनि। नास किए रज तम दोऊ गुन॥
अहो ते साधु चलन जब लागे। दीनन पर बत्सल रस पागे॥
तब अति गुह्यग्यान जो आहि। हरि को कहो कहौ मोहि ताहि॥
मैं हूँ दीन बाल अनुचर पुनि। इंद्रीजित श्रद्धा जुत हो मुनि॥
ता करि हरि पदवी मैं पाई। पुनि माया जीती जो गाई॥
हे मुनि जो भगवान कृष्न हरि। तिनमैं अरपित कर्म करै नर॥
तिन ते तीन ताप होय नास। यह फिर कहत भए हरिदास॥
जो घृत नर निरोग उपजावै। सो जो और बस्त संग पावै॥
तौ सोई घृत हे मुनि ब्यास। नर के रोगनि करै सु नास॥
ऐसे क्रिया जो मुनि जिते। है संसार हेत को तिते॥
सो जो हरि में अर्पित करै। तो नहीं फेर जन्म नर धरै॥
जो नर हरि प्रसन्नता लिए। जग में करै कर्म मन दिए॥
सो वह कर्म सुभक्ति सहेत। हे मुनि ब्यास ग्यान को देत॥
हे मुनि हरि की सिछा पाय। कर्मन को नर करै बनाय॥
तब हरि सुमरन नाम ग्रहन को। जोग होत नर गुन बरनन को॥

संकरषन प्रद्युम्न अनिरुद्ध। जिन हरि गहे रूप ये सुद्ध॥
जो हरि मंत्र मूर्ति है हे मुनि। प्राकृति रूप नाहि जिनको पुनि॥
ताको सीस निवायो यह कहि। जो नर जजै कृष्न को नित्यहि॥
ता नर को मुनि सब प्रकार करि। ग्यानवान जानो सर्वोपर॥
हे मुनि यह आग्या यह जांनि। मैं आचरन कियो सुख मांनि॥
तब हरि मोको ग्यान दियो मुनि। अरु एश्वर्य प्रेम अपनो पुनि॥
हे मुनि ग्यानवान मन धरो। तुम हूँ हरि जस बरनन करो॥
हरि जस बिन मुनि और जु आहि। ता कर जानि सकै नही ताहि॥
अरु अति दुख करि पीड़त नर को। दुख नासन मुनि है जस हरि को॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठ अध्याय

दोहा—पुर्ब जन्म सोभाग्य को कृष्न कथा सों सांति।
नारद कहिहै ब्यास सो छठे अध्याय यह जांनि॥

सूत उवाचः—
जन्म कर्म नारद के सुनि मुनि। सत्यबती सुत ब्यास कही पुनि॥
ब्यास उवाचः—
हे नारद तोहि दै उपदेस। जब सब हरि जन गए बिदेस॥
तब तुम कहो कहा मुनि करौ। अरु कहो जैसे कालहि तरौ॥
पूर्ब जन्म को तुव सुमरन मुनि। क्यों नहि काल कियो खंडन पुनि॥
जो बहु काल बलिष्ठ महा है। यह मुनि हम सो कहो कहा है॥
नारद उवाचः-
अहो ब्यास मोहि दे उपदेस। जब सब हरिजन गए बिदेस॥
तब हम बालक करत भए जो। हे मुनि सुनो कान दे के सो॥
हे मुनि मेरी जननी जोई। स्त्री मूढ़ किंकरी सोई॥
तऊ एक सुत मो कों जांनि। बांध्यो प्यार महा सुख मांनि॥
निस दिन मेरे सुख की चाहि। पै पर पराधीन सो आहि॥

हरि आधीन लोक यह ऐसें। काठ पूतरी नर वस जैसें॥
रहो हौं पांच बरस को बाल। जानों नांही देस दिस काल॥
लखि माता को प्यार महा हौं। वसति भयो मुनि व्यास तहां हौं॥
इक दिन मेरी जननी ही जो। गाय दुहावन को गमनी सो॥
मारग मांहि सर्प इक डस्यौ। ता पर तास पाय जा परयौ॥
परत ही पाय दीन मो माता। काटी तिह अजगर दुखदाता॥
तब हौं कृष्न अनुग्रह जांनि। उत्तर दिसा चलौ सुख मांनि॥
तहां मैं बड़े नगर मुनि देखें। आकर खरक ग्राम पुर पेखें॥
और किसानन के जे ग्राम। गिर तट ग्राम लखे अभिराम॥
बन उपवन फूलन की वारी। हे मुनि लखी महा सुखकारी॥
बहुत विचित्र धातु करि मंडित। हाथन कर द्रुम साखा खंडित॥
ऐसें बहुत निहारे गिरवर। मंगल जल जुत देखे सरवर॥
सुंदर सब्द करैं खग जहां। सुंदर भौरा बिहरे तहां॥
ऐसी सरसी देखत भयो। पुनि इकलो आगे मैं गयो॥
तब देख्यो इक बिपनि भयंकर। कुस वासी बांसन करि गह्वर॥
उल्लू स्यार सांप घर जामें। सरकंडे छाए पुनि तामें॥
तहां मोहि भूख प्यास पुनि लगी। इंद्री देह सु श्रम सो पगी॥
तब इक नदी मांहि मैं न्हायो। जल अचवन करि श्रमहि गवायो॥
नर करि रहित बिपन के भीतर। टिक्यो जाय हौं पीपर के तर॥
तहां मैं परमातम को ध्यायो। जैसो हरि भक्तनि नें गायो॥
चित्त प्रेम सो जीत सु लीयो। हरिपद कमल ध्यांन कों कियो॥
जब नैननि ते आसु बहाए। तब हरि हरे हरे हिए आए॥
जाके पाछे प्रेम भरो मन। पुनि रोमांच भए मेरे तन॥
तब मैं सुख समुद्र में न्हायो। जानौ नहि अपनों न परायो॥
फिरी हरि को सरूप सुखकारी। अति अनूप दुख नासक भारी॥
देख्यो नाही भयो व्याकुल जब। मन मलीन ह्वै उठि ठाढ़ो तब॥
फिर देखन की इच्छा करी। मन की लै इकाग्रता धरी॥

देखन के बहु जतन बनाए। पै हरि मो हिरदै नही आए॥
तब मैं होत भए मुनि ऐसो। भूखा आतुर होत है जैसो॥
तब हरि निर्जन बन के भीतरि। बोलत भए मधुर बानी करि॥
पुनि मेरो श्रम सबै निवारयौ। बेदहू नेत कहति ताहि हारयौ॥
हे बालक या जन्म सु मांही। मोकों लखन जोग्य तू नांही॥
जिनके रही मलिनता पूर। तिनको मेरो दरसन दूर॥
एक बेर दीनो दरसन जो। तेरी चाह बढ़ावन को सो॥
जो नर मो दरसन कों भजै। सो नर सबै कामना तजै॥
अल्प साधु सेवा तुम करी। ताते दृढ़ मति मों में धरी॥
जब यह देह त्याग तुम करिहो। देह पार्षद की तब धरिहो॥
मो में लागी बुद्धि तिहारी। सो नही कभू होयगी न्यारी॥
सृष्टि हूँ नष्ट भए ते तेरो। ग्यान रहेगो तुग्रह मेरो॥
रूप रहत जो बोलत भए। इतनी कही चुपके ह्वै गए॥
जो हरि सब बड़न के बड़े। दया पात्र मेरे हिय गड़े॥
मैं मुनि तिनको मस्तक नाय। करत भयो दंडौत सुनाय॥
तब हम लाज तजि दई हे मुनि। पढ़न लगो हरि गुह्य नाम पुनि॥
अरु तिनकी लाला सुख करनी। सुमिरन करत फिरयौ यह धरनी॥
ह्वै संतुष्ट चाहे सब त्यागी। मन ते मद मत्सरता भागी॥
करत बिचार भयो हौं तबै। मेरी मृत्यु आयहै कबै॥
सब ते ह्वै उदास हरि में पुनि। निरमल मन में धरयौ अहो मुनि॥
तब ही काल आय गयो ऐसें। फाटक गिर में बिजरी जैसें॥
जो श्रीहरि नें कही ही मोहि। सुद्ध पारषद करिहो तोहि॥
हौं पारषद होन लगो जब। पंचभूत वह देह गिरयौ तब॥
जिन कर्मन करि रच्यौ हुतो मुनि। तिन कर्मन को अंत भयो पुनि॥
प्रलै समै त्रिभवन को लै करि। सोवत भए समुद्र मांहि हरि॥
तिन संग बिधि सोवन को भयो। ताके सांस संग ह्वै गयो॥
सहस चौकरी बीत गई जब। बिधि उठि सृजन लग्यौ त्रिभवन तब॥

मेरु मरीचादिक रिष जिते। बिधि की इंद्री ते भए तिते ॥
फिरौ त्रिलोकी बाहर भीतर। हरि ने कृपा करी अति ही करि ॥
अरु यह बीना हरि मोहि दई। सप्त सुरन सो जुत रस मई ॥
अब हो मूर्छ राग उपजावत। सुंदर कृष्न कथा को गावत ॥
बिचरति फिरो त्रिलोकी मांही। मेरी गति कहू खंडित नांही ॥
जब सुंदर जस तीर्थ पाद करि। सुने चरित्र गाए जो मो करि ॥
तब मेरे हिय आवत अैसें। सीघ्र बुलायो प्रानी जैसें ॥
व्याकुल चित्त बिषे करि जिनके। भव समुद्र तरबे कों तिनके ॥
कृष्न चरित नौका इक आहि। हम हू निश्चै कीनी ताहि ॥
काम लोभ करि पीड़त चित्त। श्रीमुकंद सेवा सो मित्त ॥
तिह छिन सांत होत है जैसें। जम नियमन सों होत न तैसे ॥
अहो ब्यास पूछी जो सो सों। सो निष्पाप कही मैं तो सों ॥
अरु मैं जन्म कर्म सब कहे। जे तुव तुष्ट हेत क्यों लहे ॥

सूत उवाचः—

यों श्रीनारद मुनि अकुलाय। कही ब्यास जू सो समझाय ॥
आग्या मांगि बीन टंकारत। चले हिए नही कछु बिचारत ॥
हे सौनक यह नारद धन्न। हरि की कीरति कहत प्रसन्न ॥
बीन बजावत हरि गुन गावै। आतुर सब जगतहि सु रमावै ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
षष्ठमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तम अध्याय

दोहा-जन्म परीछत कहन को दंड द्रोन कों जानि।
सूते सुत जा ते हते यह सातएं बखानि ॥

शौनक उवाचः-

अहो सूत नारद जब गए। तब कहो ब्यास करत कहा भए॥

सूत उवाचः-

हे मुनि जहां सरस्वती बहे। तहां ब्यास को आश्रम रहे ॥

संम्याप्रास नाम ताको पुनि। बद्रवति जग्य रिषन को हे मुनि॥
पुनि बैरनि के द्रुम छाए जहां। करि आचवन ब्यास बैठे तहां ॥
पुनि एकाग्र चित्त करि लियो। नारद बचन बिचारत भयो ॥
भक्ति जोग करि मन भयो निश्चल। सब मल छाड़ि भयो अति उज्जल॥
ता मन मैं हरि मूरति देखी। माया ताके आश्रै पेखी ॥
जा माया को जीव जु पाए। गुननि रहित मोहित ह्वै जाए ॥
तब गुनिमय आपे के मांनें। ता करि करता आपहि जानै ॥
भक्ति अनर्थ सांति को हेत। जे नर जानत नाहि अचेत ॥
तिनको श्रीभागवत बखान्यौ। बेद ब्यास भक्ति रस सान्यौ ॥
सुने भागवत को नर तबै। हरि में भक्ति होत है जबै ॥
सो वह भक्ति मोहि निरवारै। भय सौकन को तुरत बिडारे ॥
श्रीसुकनाम साधु अति आहि। करि भागवत पढ़ायो ताहि ॥

शौनक उवाचः—

आतमाराम चाह सब तजी। पुनि निवृत्ति पदवी को भजी ॥
तिन सुक यह अति दीर्घ पुरान। कैसे पढ्यौ सु करो बखान ॥

सूत उवाचः-

जो निर्ग्रंथि आतमाराम। तेऊ करैं भक्ति निष्काम ॥
अैसे हरि के गुनि मुनि तिन करि। मत बिछिप्र होय श्रीसुक हरि ॥
यह अति दीर्घ पुरान पढ्यौ मुनि। हरि जन अति प्यारे जिनको पुनि॥
कहौं प्रीछत के तुम सों मुनि। जन्म कर्म परलोक प्रापति पुनि ॥
अरु अस्थान पांडवन के जो। कृष्न कथा सों जुत बरनों सो ॥
जब कौरव अरु पांडव लरे। गये बीर गति जे जे मरे ॥
भीम गदा करि टूटि गए तन। तब दुरजोधन गिरत भयो रन ॥
लखि अस्थामा दुःखित भयौ। ताके मंगल में मन दयौ ॥
तब सु द्रोपदी के सुत जिते। सूते जाय हते तिन तिते ॥
देखि द्रोपदी सब सुत मरे। रोई कूक नैन जल भरे ॥
पुनि ताको तन जरन लग्यौ सब। सांत करन अर्जुन बोल्यो तब ॥
सुन सुतहीन द्रौपदी नारी। नीच द्विजन में शस्त्र सुधारी ॥

ऐसे अस्थामा को सिर जो। ल्याऊं कांटि सरनि करिकै सो।।
ता पर तोहि चढाय न्हावाऊं। तब तेरे ये अश्रु सिराऊं।।
ऐसी कहि बानी अभिराम। कीनी सांत द्रौपदी भांम।।
बहुर चढ़े रथ ऊपर अरजुन। किये स्वारथी कृष्नचंद्र पुनि।।
कवच पहिर लै धनुषहि आछें। दौरयौ ता गुर सुत के पाछैं।।
जिन अस्थामा बालक मारे। दूर ते तिन अर्जुन नहि निहारे।।
देखत ही द्विज भयो अचेत। प्रानन की रच्छा के हेत।।
रथ में चढ़ि भाजत भयो ऐसें। शिव के भय ते सूरज जैसें।।
पुनि द्विज सुत के बाहन जिते। भाजति तें जु थकित भए तिते।।
तब द्विज कोऊ न रछक जानौं। ब्रह्म अस्त्र पुनि रछक मानौं।।
रछक जानि आचवन लयौ। ह्वै इकांत सो छोड़त भयौ।।
तदपि आहि संहार अजान। तऊ दुःख प्रानन को जान।।
ताते तेज प्रगट अति भयो। सब दिस मांहि छाय सो गयो।।
प्रान नास को हेत देखि पुनि। बोलत भयो कृष्न को अर्जुन।।

अर्जुन उवाचः –

कृष्न कृष्न हे महाभाग सुनि। भक्तन के दुख नासक तुम पुनि।।
जो नर अहो जगत में जरे। ताको तुम बिन को उद्धरे।।
तुमही आदि पुरुष ईस्वर तुम। पुन माया के परे सदा तुम।।
तुम चिच्छक्ति करि माया टारी। सुद्ध रूप में थिति सु तिहारी।।
माया करि मोहित जिनके मन। तुमरी सेव करें जब तैं जन।।
तब तुम अपनेई प्रभाव करि। देत नरन धर्मादिक हे हरि।।
तैसें ही यह तुव अवतार। पृथ्वी भार उतारन हार।।
पुन अनन्य भक्तनि को ध्यांन। पुष्ट करन को प्रगटे आंन।।
अहो देव यह कहो कहा ते। हौं नहीं जानों भयो कहां तें।।
अति दारुन सब दिस ते ध्यावै। कहो कृष्न यह कहां ते आवै।।

श्रीकृष्ण उवाचः–

अहो यह द्रोन के पुत्र चलायो। ब्रह्म अस्त्र तिंह तेज सु छायो।।

पै खैंचनि में आहि अजान। जानि प्रान दुख दीनौ तान।।
हे अर्जुन यह अस्त्र जु आहि। काटनि जोग अस्त्र नहि याहि।।
ताते दीरघ तेज यह अर्जुन। भेदो अपनो अस्त्र तानि पुनि।।

सूत उवाचः—

बीरन को मारै जो अर्जुन। जल अचयो श्रीकृष्न बचन सुनि।।
दै परदछना छोड़ो अर्जुन। ब्रह्म अस्त्र को ब्रह्म अस्त्र करि पुनि।।
दोऊ तेज परसपर मिलि करि। लीने छाय अकास स्वर्ग धरि।।
दोऊ छाय बढ़ति भए ऐसें। प्रलै समें रवि अगिन सु जैसें।।
दोऊ अस्त्र को तेज सु छयो। तीनो लोक जरावत भयो।।
ता करि जरी प्रजा तत्काल। मानति भई प्रलै को काल।।
सबै प्रजा का प्रलै सु देखी। मुनि सब लोक नास को पेखी।।
पुनि हरिहू को मत पायो जब। दोऊ अस्त्र खैंच लीने तब।।
लाल नैन अर्जुन के भए। दौरि अस्थामा के ढिग गए।।
जाय के बांधि लियो द्विज ऐसें। पसुहि जेवरनि सों ले जैसें।।
अर्जुन निज बल प्रगट सु कियो। बैरी बांध जेवरन लियो।।
बांधि लै चलो पूर कों जबै। कुपित होय हरि बाले तबै।।
हे अर्जुन यह नीच महा है। बेगि मारि देखौ जु कहा है।।
निर अपराध बाल है जिते। सूते जाय हते इन तिते।।
मत्त बाल सूतो रथ हीन। पुनि सरनागति अरु भय लीन।।
तियारु पुनि बावरो जु आहि। मारे नहीं धर्मबित ताहि।।
अपनें प्रांनहि जो निरदै नर। पोषत प्रान और के ले करि।।
ताको नास ताहि सुख करै। ना तो जाय नरक में परै।।
अरु जो तें जु तिया सो कही। सोऊ हमनि सुनी सब सही।।
हे तिय जिंह बालक मारे सब। ताको मूंड काटि ल्याऊं अब।।
ताते यह पापी सुत हर्त्ता। पुनि भर्त्ता को बिप्रिय कर्त्ता।।
कुलदूसन अरु सस्त्र धारि पुनि। बेग याहि मारै किन अर्जुन।।
ऐसे धर्म परीछा लेंन। अर्जुन प्रेरयौ पंकज नैन।।

तऊ नांहि गुरु के सुत मारे । जदिप सबै पुत्र संहारे ॥
कृष्नहि मित्र सारथी जा के । सो अर्जुन घर आय तिया के ॥
अस्थामहि आगै ले करो । पुत्र सोक तिय के हिय भरो ॥
पसु सो बंधो जेवरन आयो । निंद कर्म करि मुख तिन नायो ॥
असो गुर सुत देखो जबै । सृष्ट सुभाव द्रोपदी तबै ॥
दौरि जाय पायन में परी । कृपा आय तिय के हिय भरी ॥
बंधन सहि न सकी बोली तब । छोड़ि छोड़ि अर्जुन याको अब ॥
मंत्रन जुत है धनुरबेद जो । जास कृपा तें तुम जान्यों सो ॥
खैंचन और छोड़िबो जान्यौ । अस्त्र समूह सबै पहिचान्यौ ॥
पुत्र रूप यह द्रोन सु बहै । देखि कृपा अर्द्धंगी यहै ॥
पति संग जरी न ताते अर्जुन । बेगि छोड़ि यह द्विज अरु गुरु पुनि ॥
हे अर्जुन धर्मग्य महावर । गुरुकुल सदा पूज्य है तुम करि ॥
पुनि तुम करि दंडौतहि जोग्य । दुख पैबे को आहि अजोग्य ॥
हे अर्जुन याकी जननी जो । गौतम बंस भई प्रगट सो ॥
पतिहि आहि देवता जाकें । नैनन ते जल जाहु न ताके ॥
पुत्रहीन मैं रोऊं जैसें । पीड़त होहु कृपी जन असें ॥
जो नृप इंद्रीजीत न लेय । पुनि विप्रन को पीड़ा देय ॥
जब सब द्विज पीड़ा कों पावै । तब नृप कुल को बेगि जरावै ॥

सूत उवाच—

हे मुनि यह जु द्रोपदी युक्त । धर्म न्याय करुना करि जुक्त ॥
कपटहीन सम श्रेष्ठ आहि पुनि । धर्म पुत्र के मन मानी सुनि ॥
कृष्न नकुल सहदेव धनंजय । सात्यकि और तीय सब मन दय ॥
तिया द्रोपदी की बानी सुनि । भलें भले यो कहन लगै पुनि ॥
भीम क्रोध करि तब सु उचारी । या को बध या ही सुखकारी ॥
नहि अपने नहि भर्त्ता अर्थ । सूते पुत्र हते इन ब्यर्थ ॥
भीम द्रोपदी बचन कहे जे । कृष्न चतुरभुज सुनै सबै ते ॥
पुनि अर्जुन को बदन निहारौ । हंसि के कछु बचन उचारौ ॥

श्रीकृष्ण उवाचः—

अर्जुन नीचहू द्विज न मारिए । बेगि मारिए शस्त्र धारिए ॥
यह दोऊ मम अग्या जाते । दोऊ सांच करे तुम ताते ॥
अरु जो करी प्रतिग्या आप । सोऊ सांच करो निसपाप ॥
भीम द्रोपदी को मेरो पुनि । मन मानो करिए हो अर्जुन ॥

सूत उवाचः-

अर्जुन हरि के मन की जानि । खड़गइ लै द्विज के ढिग आनि ॥
मूंड माहि इक मनि ताके जो । केसन सहित काटि लीनों सो ॥
हत्या करि सरूप सब गयो । तेज हीन मनि हीनि सु भयो ॥
तब सब बंधन लिये निवारि । गांव मांहि ते दिये निकारि ॥
सीस मुंडाय लय धन घर ते । अथवा दिए निकास नगर ते ॥
यही दंड है नीच दुजनि मुनि । दैहिक दंड नाहि ताको पुनि ॥
सहित द्रोपदी पांडव जिते । पुत्र सोक करि आरत तिते ॥
मरे बालकनि की कीनी पुनि । जो दाहादि क्रिया ही है मुनि ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टम अध्याय

दोहा—द्रोन अस्त्र ते राखि लिय विष्नरात भगवान ।
कुंती अस्तुति धर्म सुत सोक आठवे जान ॥

सूत उवाचः—

मरे बालकनि को जल देंन । पांडव गंग चले बह नैन ॥
पुनि आगे कीनी सब नारी । लीने संग कृष्न सुखकारी ॥
जाय गंग में जल को दियो । पुनि मिल सबनि बिलाप सु कियो ॥
हरि पद रज करि सुध जल जामें । न्हाए सब मिलि ता गंगा में ॥
तहां भैयनि के सहित युधिष्ठिर । बैठे गांधारी धृतराष्टर ॥
कुंती और द्रोपदी महां । सुत दुख पीड़ित कहिय कहा ॥
बंधुहीन भए पीड़त सबै । मुनिन सहित श्रीकृष्न सु तबै ॥

भए सबनही को समझावति। काल की दुर्जय चाल दिखावति॥
दुष्टन राज छीन लीनी जो। पुनि युधिष्ठिरहि कृष्न दियो सो॥
गहे द्रोपदी के जिन केस। ते सब मारे दुष्ट नरेस॥
धर्महि जग्य कराए तीन। जिनमें बस्तु अनेक नवीन॥
तिन करि जस बिस्तार्यो ऐसें। बामन नें मघवा को जैसें॥
लई पांडवनि सों आग्या पुनि। संग लए सात्यकि उद्धव हे मुनि॥
कृष्न सबै द्विज पूजे आछे। सबनि कृष्न पूजें पुनि पाछें॥
तब श्रीकृष्न लगे अति भले। रथ में चढ़ि द्वारावती चले॥
तभी उत्तरा भय करि छाई। हरि के समुहे दौरी आई॥
उत्तरा उवाच:-
हे जोगीस देव हे जगपति। मेरी रछ्या करो महीपति॥
तुम ते निरभै और न कोई। जाते मीच परसपर होई॥
अहो नाथ इक बान जरावति। मेरे सनमुख दौरो आवति॥
सो मोहि अहो निसंक जरावो। पै मति मेरो गर्भ सतावो॥
नीके बचन सुन्यौ जदुराई। भक्तनि पर बत्सलता छाई॥
द्रोन अस्त्र ताको जान्यों हरि। पांडव रहित कियो चाहे धरि॥
पांच बांन सनमुख आवत पुनि। लख्दति भये सब पांडव हे मुनि॥
अति प्रज्वलित अगिन से आए। लखि अप अपने अस्त्र उठाए॥
मति पांडवनि कृष्न मैं धरी। तिनको दुख देख्यो जब हरी॥
तब निज चक्र सुदरसन ले करि। तिनकी रच्छा करत भए हरि॥
जो जोगेस बसे जन हिए। सो कुरुवंसी बीज के लिए॥
गर्भ उत्तरा को हो जोई। चारो धांते घेर्यौ सोई॥
ब्रह्म अस्त्र अति सफल सु आहि। कोऊ निवार सकै नही ताहि॥
सोऊ सांत तुरत ह्वै गयौ। चक्र को तेज प्रगट जब भयो॥
हे सौनक हरि आचरज रूप। तिनमें यह आचरज न अनूप॥
जो हरि अपनी माया धारि। जग रचि पाले करै संहारि॥
हरि द्वारावति चलन लगै जब। कुंती जाय कही तिन सों तब॥

लै करि संग बहू बेटे ते। ब्रह्म अस्त्र ते हरि राखे जे॥
कुंती उवाच:-
हे हरि तुम माया ते दूरि। आदि पुरुष ईस्वर भरपूरि॥
सब हिये बसो अलख तऊ आहि। मैं यह सीस निवाऊं ताहि॥
नास रहित तुम ईस्वर हरी। ढकि रहे बिच माया चिक परी॥
मूढ दृष्टि तोहि लखैं न ऐसें। नट आचरन अग्य नर जैसें॥
परमहंस उज्जल चित जिनके। हिय हू में नहि आवत तिनके॥
भक्ति हेत तुम प्रगटे आहि। हम तिय कैसे देखै ताहि॥
कृष्न हे बासुदेव जग बंदन। नंद कुमार देवकी नंदन॥
हे गोबिंद कमलदल लोचन। कमल चरन सबके दुख मोचन॥
कमलनाभ बनमाला धरे। तुमको नमो नमो हम करे॥
अहो कृष्न जो तुमरी माता। रोकी ताहि कंस दुख दाता॥
बहुत काल जब पीड़ा पाई। तब तुम ताको जाब छुटाई॥
मोहि तो पुत्रनि सहित उबारी। तुरतही बिपति अनेक निवारी॥
बिष ते हे हरि तुमनि जिवाए। जरत लाख घर मांहि बचाए॥
अहिडिंबादिक ते उबारे। अरु बन कलेस सबै निरवारे॥
बीच सभा में बसन बढ़ाय। हे हरि तुमही भए सहाय॥
महारथीन जे अस्त्र चलाए। तिनतें रन में तुमनि बचाए॥
द्रोन अस्त्र तें रच्छा करी। सब ठौरन ते राखे हरी॥
ताते कृष्न बिपति है जितनी। होहु निरंतर हमकों तितनी॥
जिन बिपतन में तुमरो दरसन। ताते जग को होत अदरसन॥
धन बिद्या एश्वर्य श्रेष्ठ तन। इन करि मत्त भयो हरि जो जन॥
सो न लै सकै नाम तिहारो। जा ते तू निष्किंचन प्यारो॥
साधु अकिंचन ही धन जिनके। भई गुन धृत्ति निबृत्ति सु तिनके॥
आत्माराम मुक्ति पति आहि। मेरे नमस्कार है ताहि॥
सब ठां सम बिचरत हें प्रभु हरि। सदा सून्य तुम आदि अंत करि॥
हम तोहि काल लखति हैं यातें। नरनि में बैर होत है जातें॥

हे हरि नर सरूप धर जोई । करो जांनि जन सकै न कोई ॥
कोऊ न वैरी प्रीये तिहारे । तामें विषम बुद्धि नर धारे ॥
हे विस्वात्म अजन्मा तेरे । जनम अरु कर्म अकर्ता केरे ॥
पसु नर रिष जल जियनि मंझारी । लखियत सु तो बिडंबन भारी ॥
हरि तुम जब दधि भाजन फोरि । भाजे गेह जसोदा दौरि ॥
पुनि तोहि बांधत रज्जु लइ जब । नीचो मुख करि लीनो तुम तब ॥
पुनि नैननि में जल भर आयो । तिह दृग जल कज्जलहि बहायो ॥
भै हू भै पावति है जातें । तिन तुम भै पायो जसुदा तें ॥
सो तव दसा जबै हिय आवै । हरि तब मोहि मोह उपजावै ॥
कोई कहै धर्म पुत्र जस कारन । जन्म अजन्मा कीनो धारन ॥
जदु के बंस मांहि लै ऐसें । मलियाचल में चंदन जैसें ॥
जब वसुदेव देवकी बरे । कोई कहै तब सु आय अवतरे ॥
या जग के सुख कों विस्तारन । और सबै असुरन को मारन ॥
कोई कहें धरनि भार जब भरी । तब विधि जाय प्रार्थना करी ॥
तब धर भार हरन प्रगटे यो । बारिधि बूडति कों नवका ज्यो ॥
कोई कहै या जग में पीड़त नर । निठुर अविद्या काम कर्म करि ॥
ता को सुमरन श्रवन जोग्य जो । कर्म करन को हरि प्रगटे यो ॥
तेरे सुंदर चरित जिते हरि । सुमिरै सुनै बखानै जो नर ॥
श्लाघा करै निरंतर गावै । सो भव नासक तुव पद पावै ॥
हे प्रभु भक्तनि हेत करो सब । हमरे जीवनि मित्त तुम्ही अब ॥
सब नृप हमसों वैर करांही । तुम बिन हमरे कछु है नांही ॥
हम जांने पद कमल तिहारे । तिनै छोड़ि कहां जैहो प्यारे ॥
हे हरि तुव दरसन बिन जादों । नाम रूप करि सबही पांडो ॥
सुन हे कृष्ण होत है ऐसे । जीव बिना सब इंद्री जैसे ॥
तुव पद सुंदर चिन्हनि करि हरि । जैसें अब सोहत है यह धर ॥
तैसें हे हरि तुम जैहो जब । सोभत नाहि होयगी यह तब ॥
संपतिजुत जे नगर मुरारी । पके अन्न आदिक जहां भारी ॥

बन गिरि नदी समुद है जिते । तुव दरसन ते बढ़ति हैं तिते ॥
हे बिसवेस बिस्व मूरति हरि । बिस्वात्म मो बात कान धरि ॥
जादव अरु पांडवनि मांहि जो । स्नेह पासि किन काटि लेहु सो ॥
हे जदुपति सुंदर सुखकारी । तुमही में मति लगो हमारी ॥
तुममें प्रेम बढ़ो मो ऐसें । गंगा ओघ समुद में जैसे ॥
हे गोविंद कृष्न जादवपति । हे अर्जुन के मीत प्रीय अति ॥
दुःख हरन द्विज गाय सुरन को । प्रगट भए धरि रूप नरन को ॥
प्रथवी के द्रोहिन को कुल सब । जारनि कों तुव अगिन रूप अब ॥
हे जोगेस सदा बलवान । सबके गुरु तुमही भगवान ॥
भक्तन के दुख नासक सुख करि । तुमको नमो नमो हमरे हरि ॥
सूत उवाचः—
यहु महिमा हरि की अस्तुति जो । अद्भुत भांति करी कुंती सों ॥
निज माया करि मोहित से पुनि । हसे मंद हरि तिह अस्तुति सुनि ॥
कुंती की हरि बानी मानी । चलन द्वारका को मन ठानी ॥
कुंती मुख्य जिती ही नारी । तिन सो आज्ञा मांगि मुरारी ॥
चलन द्वारका को लागे जब । प्रेम सो धर्म पुत्र राखे तब ॥
बधु सोक करि दुखित भूप पुनि । ताको सब ही ब्यासादिक मुनि ॥
हरि की इच्छा मांहि अज्ञांन । समझाय बहु बचन बखांन ॥
अद्भुत करमा हरि हूँ हे मुनि । समझये पै नही समझे पुनि ॥
तब सु युधिष्ठिर भये उचारत । सुहृदन को बध हिये बिचारत ॥
चित अबिबेकी करि दुख भयो । स्नेह सों मोह के बस है भयो ॥
अहो देखो मेरो अग्यान । जा सरीर कों खैहै स्वांन ॥
ता हित दुष्ट चित्त मैं मारे । बहुतक अति प्यारे ते प्यारे ॥
मित्र पिता द्विज बालक भ्रात । इनको मैं वैरी बिख्यात ॥
मैं तो बरष हजारन मांही । नरकन ते छूटोगो नांही ॥
भूपहि धर्म जुद्ध के मांही । बैरिन को बध पाप सु नांही ॥
अहो यह सिच्छा बचन तिहारो । मोहि न ग्यान करावन हारो ॥

बंधुहीन हस्त्रिन को द्रोहि। अहो द्विज अब अब लाग्यो है मोहि॥
ताहि ग्रह आश्रम के जु कर्म करि। दूर करन को जोग्य न मुनि बर॥
जैसें कीचहि कीच लाय मुनि। धोय नेंकु न सुद्ध होय पुनि॥
पुनि जो मदिरा भोजन जोई। मदिरा माजै सुद्ध न होई॥
ऐसे मख में बहु हत्या करि। नर की इक हत्या न जाय टरि॥
इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
अष्टमोऽध्यायः॥ ८॥

नवम अध्याय

दोहा—कृष्नहि स्तुति करि भीष्म जू, राजहि धर्म बखांनि।
आप प्राप्त ह्वै है हरिहि, नव अध्याय यह जांनि॥
प्रजा द्रोह ते डरप्यो राजा। सर्व धर्म जानन के काजा॥
बेगि गए कुरुक्षेत्र सु नामैं। जहां भीष्म जू सर सज्या में॥
पुनि राजा के भ्राता जिते। पाछे चले रथहि चढ़ि तिते॥
जिनके सुंदर छोरा लगें। स्वर्न आभरन करि जगमगें॥
चले ब्यास धौमादिक जे मुनि। रथ चढ़ि कृष्न धनंजय हूँ पुनि॥
इन करि धर्मपुत्र सोहै यों। जछनि के मांही कुबेर ज्यों॥
भीष्म भूमि में परै सु ऐसें। स्वर्ग ते परयौ देवता जैसें॥
कृष्न सहित पांडव जे गए। लखि भीष्महि सिर नावत भए॥
औरो भीष्महि देखन हेत। बहुत ब्रह्मरिख गए कुरखेत॥
अरु देवरिख राजरिख धाए। पर्वत धौम्यरु नारद आए॥
भरद्वाज बृहदस्व ब्यास मुनि। परसराम सिष्यनि समेत पुनि॥
इंद्रप्रमद बसिष्ठ गौतम त्रित। कक्षीवान गृहत्समदासित॥
बिस्वामित्र सुदर्सन सुक मुनि। सिष्यनि जुत आए कस्यप मुनि॥
और बृहस्पति आदिक जिते। महाभाग मिल . आए तिते॥
देखि सबै पूजै धर्मग्य। भीषम देस काल में बिग्य॥
कृष्न कृपा करि मूरत धारी। जगत ईस बैठे सुखकारी॥
भीषम हरि प्रभाव को जांनि। हिए माहि पूजे भगवान॥

पांडव पुत्र ढिग बैठे आनि। बिनै प्रेम करि भीजे जानि॥
प्रेम अश्रु भीषम के आए। बचन पांडवन को सु सुनाए॥
अहो पांडव क्लेसन मांही। जीव को तुम जोग्य हो नाही॥
द्विज अरु धर्म आसरो जिनको। अति अन्याय क्लेस है तिनको॥
महारथी जब पांडु पधारे। तब कुंती बहु क्लेस सहारे॥
हे पांडव इक तुमरे हेत। तुम जब बालक और अचेत॥
हे पांडव तुमको है दुख जो। काल कियो मैं मानत हौं सो॥
जास काल के बस त्रिभवन यो। पवनाधीन मेघ के गन जो॥
जहां गांडीव धरैया अर्जुन। धर्म पुत्र सो राजा है पुनि॥
गदा पांनि जहां भीम बिराजै। कृष्न मित्र तहां बिपता छाजै॥
हे नृप यह हरि की इछा जो। कोऊ जन नहि जानि सकै सो॥
जे कबि जाननि इछा करै। ते तो महा मोह में परै॥
हे नृप यह जग हरि आधीन। तुमहूँ निश्चै करो प्रवीन॥
निश्चै करि हरि को अनुसरो। प्रजा अनाथहि पालन करो॥
ये साक्षात कृष्न भगवान। आदि पुरुष नारायन जांनि॥
माया करि मोहित जग भारो। दुरि बिचरति जादवनि मंझारी॥
इनको जो प्रभाव ताको पुनि। जानति कपिलदेव नारद मुनि॥
पुनि संकर नारायन जानति। ताको तुम माया सुत मानति॥
मंत्री मित्र दूत करि बरे। स्नेह सो बहुर सारथी करे॥
ये निरदूषित निरहंकार। सर्वातम समद्रिष्टि मुरारि॥
तुमरे घटि बढ़ि कर्मन मांही। इनकी बिषम बुद्धि है नाही॥
हे नृप कहा कहौ मैं इनकी। भक्तन मैं कृपालता जिनकी॥
देखो अब मैं छोड़त प्रान। ताको दरसन दीनो आनि॥
हे नृप जो जन भक्तिहि करै। मन ले कै श्रीहरि में धरै॥
तन छोड़े श्रीहरि गुन गाय। सो सब कर्मन ते छुट जाय॥
सोई ये देव देव भगवान। अरुन नैन आनंद मुसिकान॥
अमल कमल मुख अलख बिराजै। सुंदर चार भुजा छबि छाजै॥

जो लौं मैं तन त्यागो अहो। तौ लौं मेरे आगे रहौ॥
सूत उवाचः—
सर सज्या में सैन है जिनकी। धर्म पुत्र मुनि बानी तिनकी॥
सुनति रिपिन के धर्म पुत्र पुनि। बहुत धर्म पूछे ये हो मुनि॥
नर के जो सौभाविक धर्म। दान धर्म राजन के कर्म॥
बहुर निवृति प्रवृति सु धर्म। मोच्छ धर्म इस्त्रिन के धर्म॥
बहुरो भगवत धर्म अहो मुनि। बर्नाश्रम के धर्म जिते पुनि॥
धर्म अर्थ अरु काम मोच्छ जे। करि बिस्तार सुगम बरने ते॥
जुत उपाय ग्रंथनि में जैसें। तत्तबेता भीषम कहै तैसें॥
मीच करी निज बस में जाने। पुनि सब धर्म बखांने ताने॥
काल उत्तरायन ताहि आयो। जो सब जोगन के मन भायो॥
तब भीषम चुप को ह्वै गयो। सब ते मन छुटाय पुनि लयो॥
कृष्न चतुरभुज आदि पुरुष जो। पीतांबर ओढ़ ठाढ़े सो॥
तिनमें भीषम मन लै धरो। खुले नैन सर सज्या परो॥
सुद्ध ध्यांन करि गए अमंगल। पुनि सब इंद्री भई अचंचल॥
कृष्न दरस तें बिथा सु टरी। तन छोड़ति हरि अस्तुति करी॥
भीषम उवाचः—
सब ते श्रेष्ठ जादवनि में सों। मगन सरूपा नंद मांहि सों॥
कभू बिहार करन के हेत। माया को आश्रै सों लेत॥
जाते होत जगत अभिराम। तामें अरपो मति निसकाम॥
त्रिभवन में जो सुंदर महा। स्याम सरूप सु कहिए कहां॥
संदुर पीत बसन अंग धारै। रवि किरननि की छबि हि निहारै॥
बदन कमल में बहु छबि छाजै। तहां घुंघरारी अलक बिराजै॥
ता अर्जुन के मात मंझारी। निसकाम रति होहु हमारी॥
जुद्ध माहि घोरन की रज रचि। मंद मंद हालत जिनके कच॥
श्रम के जल कन करि मुख सोहै। मेरे सरन दुखी मन मोहै॥
सरनि जटित कटि कवच जास तन। ता हरि में नित रहो मोर मन॥

जो हरि अर्जुन की सुनि बानी। सैना अपनी और बिगानी॥
दुहुवनि माहि हांकि रथ राखौ। यह वह यह वह पुनि यो भाषौ॥
ता करि सबही आयु निबेरी। पारथ सखा में रति होहु मेरी॥
अर्जुन सैना मांहि निहारे। द्रोनाचार्य आदि अति प्यारे॥
तिनको बध लखि पाप उचारी। मैं नहीं लरिहो अहो मुरारी॥
तब हरि ताको जो अग्यान। हरि लीनो गीता सु बखांनि॥
ता हरि के चरननि में अहो। मेरी मति सुनिरंतर रहो॥
अपनी छाड़ि प्रतिग्या हरी। मेरी बांनी सांची करी॥
रथ तें कूदि चक्र करि मैं लय। प्रथ्वी हूं कों उपजावत भय॥
मोहि मारिबे को आयो यों। सिंह गजहि मारन धावै ज्यौं॥
दौरत मांहि पीत पट परो। ताहू को संभ्रम नहि करो॥
मेरे तीछन सर जाके लगि। रह्यौ रुधिर सों देह सबै पागि॥
कवच के टूक टूक ह्वै गए। तब मोहि मारन सनमुख भए॥
सोई कृष्न मुकंद मुरारी। अहो होय गति सदा हमारी॥
अर्जुन को रथ कुटंब है जा के। बेतरु बागडोर कर ता के॥
बृत्ति स्वारथी की करि महा। सोभित भए सु कहिए कहा॥
इनको देखि मरे रन में जे। इनके रूपहि प्राप्त भए ते॥
ता हरि में रति होहु हमारी। प्रांन छोड़िबे की मन धारी॥
जा हरि को सुंदर जो हांस। मधुर चाल मैं महा बिलास॥
प्रीति सहित अवलोकन करी। तासा बृज तिय आदर भरी॥
प्रेम सो होय बावरी पाछे। किया कृष्न अनुकरनहि आछे॥
तब सब पावति भई बिहारी। ता हरि में रति होहु हमारी॥
राजसूय मख कियो युधिष्ठिर। तामें मुनि गन बहु राजा बर॥
तिनके पहल कृष्न सुखकारी। पावत भए सू पूजा भारी॥
पुनि सबके आत्मा जो अहो। सो मेरे नैनन ढिग रहो॥
जो श्रीकृष्न अजनमा गाए। सब तन धारो आप बनाए॥
सब के हिये एक राजै यों। सबके द्रिगन माहि इक रवि जो॥

भेद मोह मेरो अब गयो। उहीं कृष्न को प्रापति भयो ॥

सूत उवाच —

मन बानी नैनन की बृत्ति। कृष्न मांहि ही करी प्रबृत्ति ॥
स्वांसनि खैंचि भीतरे लये। पुनि तन में न्यारे ह्वै गये ॥
सुद्ध ब्रह्म की प्रापति भई। सब जन ऐसे जानि सु लई ॥
तनक ह्वै गए चुपके ऐसें। संध्या समे पखेरू जैसें ॥
तब नर और देवता जिते। बजवति भए नगारे तिते ॥
देवनि पुष्प बृष्टि बरषाई। साधन पुनि पुनि करी बड़ाई ॥
भीष्म परलोकहि गमने जब। धर्म पुत्र दाह आदि कियो तब ॥
औरो क्रिया करी सब हे मुनि। द्वै घटका बहु सोक कियो पुनि ॥
बहुरी गुह्य नामनि करि भीनी। हरिपि मुनिन हरि अस्तुति कीनी ॥
कृष्न ही सबन हिये धरि लए। पुनि अप अपने घर को गए ॥
धर्म पुत्र संग लए मुरारी। आय हस्तीना नगर मझारी ॥
गांधारी धृतराष्ट्र छए दुख। नृपतिन को समझाय दियो सुख ॥
धृतराष्ट्र की आग्या पाय। पुनि श्रीकृष्न कही समझाय ॥
जब अपने पुरुषनि को राज। धर्म सहित नृप कियो विराज ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृत
नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशम अध्याय

दोहा—नृप कारज करि द्वारका, जैहैं श्रीभगवान।
पुर तिय अस्तुति करैंगी, दसै अध्याय यह जांनि ॥

सौनक उवाच—

धर्म पुत्र धर्मग्य जु आहि। पुनि सब भोग प्राप्त भए ताहि ॥
बैरी सस्त्र धरैया जिते। अहो धर्म सुत हरि के तिते ॥
भैयनि सहित राज कियो कैसें। अरु कहो करत भए जो जैसे ॥

सूत उवाच—

बंस रूप बन आग लगी जब। ता करि कौरव बंस जरयौ सब ॥

ताहि अंकुरित कियो मुरारी। जो जग के पालन सुखकारी ॥
राज्य धर्म पुत्रहि बैठायो। जो सब पुरुषन सो चलि आयो ॥
भीषम कृष्न के बचन सुने जब। धर्म पुत्र के ग्यान भयो तब ॥
पुनि अग्यान सबै मिट गयो। हरि को एक आसरो लयो ॥
सब भैया अनुवर्त्ती ताहि। पृथ्वी समुद्रांत जो आहि ॥
ताकी रछा करत भयो यों। इंद्र सरन गहि बामन की ज्यों ॥
तब सु कृष्न सुंदर सुखकारी। मन में भए प्रसन्न सु भारी ॥
राजा धर्म पुत्र भए जबै। मन मानी बरषा भई तबै ॥
धर ने चाह पूर्न करि दई। आनंदित ह्वै गैयां अई ॥
अत्र समुद्र नदी गिर हे मुनि। छोटे बड़े बृछ जितनें पुनि ॥
मन बांछित फल देत भए सब। और प्रभाव एक बरनो अब ॥
मन तन की पीड़ा नहि जहां। तीनों क्लेस भाजि गए तहां ॥
कछुक महीनां सुंदर स्याम। बसे हस्तनापुर अभिराम ॥
सुहृदनि को सब सोक निवारन। बहन सुभद्रहि सुख बिस्तारन ॥
हरि सब सो आग्या मांगी फिर। कोऊ मिल्यो किनहू नायो सिर ॥
मिले धर्मसुत को सिरनाय। रथ चढ़ि चले पुरहि जदुराय ॥
गांधारी कुंतीरु सुभद्रा। सत्यवती द्रोपदी उत्तरा ॥
धृतराष्ट्र जुरस गौतमबर। धौम्य नकुल सहदेव बृकोदर ॥
कृष्न बिरह सह सकैं न कोऊ। महामूढ़ मोहित भयो सोऊ ॥
करै साधु हरि जस की धुनि। एक बार हू नर जो सुनि ॥
तास कुसंग सबै छुटि जाहि। साधु बिरह सह सकैं सु नाहि ॥
बैठन भोजन सोवन दरसन। मिलि बतरान बहुरि मुनि प्रसन ॥
हरि सों पांडव बरते ऐसें। ते कहो बिरह संहारे कैसें ॥
चित्त पांडवनि के हरि संग। बंधे सनेह सो द्रग भय पंग ॥
श्रीकृष्नहि देखन के हेत। लाय लाय सब भेटन देत ॥
पुर ते बाहर निकसे हरि जब। सुहृदनि की तिय बिकल भई तब ॥
रोकि लिये द्रग आंसू याते। पियहि न होय अमंगल जाते ॥

नौबत संख मृदंगन संघा। भेरी बीन दुंदभी घंटा॥
ढोल ढोलकी और नगारे। बाजति भए तिहीं छिन सारे॥
और कौरवनि की तिय जिती। देखन चढ़ी सुमहलन तिती॥
सलज प्रेम सो पियहि निहारें। बहुरो ऊपर फूलनि डारे॥
मोतिन की माला है जाके। रतननि जटित दंड है ताके॥
अैसो स्वेत छत्र इक आहि। कृष्न मित्र अर्जुन लयो ताहि॥
दोय चवर सोभा सों छये। उद्धव सात्यकि इनते लये॥
तब सो कृष्न बहु सोभा पाई। ऊपर पुष्प वृष्टि पुनि छाई॥
पुनि श्रीकृष्न जात हैं जहां जहां। सत्य असीस देत द्विज तहां तहां॥
निरगुन को ते आहि अजोग। सगुन कृष्न को सब ही जोग॥
और कौरवनि की जे नारी। जिनके मन हरि लिये मुरारी॥
तें सब मिल संवादहि करै। जे संवाद बेद मन हरै॥
हे सखी आदि पुरुष भगवान। प्रलै प्राप्त होय जब आनि॥
तब सब अप सरूप में थिति करि। रहत एकही जो ईस्वर हरि॥
पुनि सब जीव भरे गुन तीन। ता ईस्वर में होत सु लीन॥
तबहू रहे एक जो ईस। सोई ये कृष्नचंद्र जगदीस॥
सिरजन की इच्छा है जाहि। जगत मोहनी प्रेरी ताहि॥
ता मायहि अनुसरै सोई हरि। रहित जीव जे नाम रूप करि॥
तिनके नामरु रूप बनावति। सस्त्र बनाय कर्म करावति॥
इंद्री पवन जीत जिन लई। निरमल बुद्ध भक्ति करि भई॥
कृष्न चरन को देखति ते नर। बुद्धि सुद्धि करन बेई हरि॥
हे सखी इनकी कथा सुहाई। गुह्य श्रुतिन में कविन सु गाई॥
त्रिभुवन को अपनी माया करि। रचि पालै संहारै जो हरि॥
पुनि तिन मैं आसक्त न होई। हे सखी ये श्रीकृष्न हैं सोई॥
तमोगुनी जब होय नृपतिबर। पुनि जीवै बहुतें अधर्म करि॥
तब जुग जुग में सत्य मूर्ति हरि। जग के मंगल को प्रगटै धरि॥
थापे दया सत्य सुभ बानी। पुनि जग ईस्वर जहां सुखदानी॥

श्लाघा जोगि आहि जदुकुल अति। जामें जन्म लियो है श्रीपति॥
अति पवित्र यह मथुरा याते। उत्तम हरि बिहार कियो जाते॥
अहो स्वर्ग जस नाम सु करै। पृथ्वी जसहि द्वारका धरै॥
जहां सब अैसें हरिहि निहारें। हसि अवलोक अनुग्रह टारे॥
हे सखी इनकी पतिनी जिती। नीके हरि पूजत भई तिती॥
कीन्हे ब्रत अस्नान होम सब। जाते अधरामृत पीवत अब॥
जा अधरामृत सो सब बृजतिय। मोहि गई जिनके हरि में हिय॥
पुनि यह गए स्वयंबर में जब। जीत मत्त सिसपालादिक सब॥
तहां ते बहु नारी सुकुमारी। लाए ये श्रीकृष्न मुरारी॥
सुत जु सांब प्रद्युम्न हैं जिनके। बलही आहि मोल पुनि तिनके॥
पुनि हरि भौमासुर को मारि। लाए नारी कैऊ हजार॥
पराधीनता सौच न आहि। अैसी स्त्री जो निज ताहि॥
करत भई ये तिय अति सोहन। जिनके कमलनैन मन मोहन॥
सुंदर बानी कहि मुख देत। जिनके कभू न तजे निकेत॥
अैसे जे जे पुर की नारी। सुंदर बानी भाषन हारी॥
हसि के तिन सतकार ही करि। जात भय श्रीकृष्नचंद्र हरि॥
स्नेह ते धर्म पुत्र ने घनी। हय गय रथ प्यादन की सनी॥
सैना हरि के संग पठाई। बैरिन ते संका नृप पाई॥
कौरव कृष्न बिरह सो तये। बहुत दूर लौं संग सु गये॥
तिनहि निवारि पुरी हरि आए। संग उद्धवबादिक जे गाए॥
कुरुछेत्र कुरुजंगल देस। सूर सैन पंजाब सुदेस॥
ब्रह्मावर्त्त जमुन तट देस। मत्सदेस अरु मारुदेस॥
सरस्वती तट देस अहो मुनि। अल्पोदिक सोबीर देस पुनि॥
लांघे सब आभीर सु देस। पहुँचे जाइ द्वारिका देस॥
नेकु कृष्न के घोरा हारे। हे सौनक मुनि हरि के प्यारे॥
अहो श्रीकृष्न जाय पुन जहां जहां। पूजन करत प्रजा सब तहां तहां॥
अस्त होन लाग्यो सूरज जब। गये पश्चम दिस सांझ समे तब॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

एकादश अध्याय

दोहा—बंधुन की स्तुति सुनत, कृष्न द्वारका आय ।
जो विहार कीनो सोई, कहत ग्यारहें अध्याय ॥

सूत उवाचः—

देस द्वारका संपति छाए । सुंदर कृष्नचंद्र तहां आए ॥
आय आपनो संख बजायो । ता करि सब के दुखहि सिरायो ॥
सो वह उज्जल संख रसाल । अधरन की लीला करि लाल ॥
हरि करि कमलन में बाजे यों । कंजन में राज हंस गाजे ज्यों ॥
जग के भय हू कों भयकारी । सुनि के संख सब्द सुखकारी ॥
सबै प्रजा हरि सनमुख आई । दरस लालसा मन में छाई ॥
कृष्न आत्माराम जु आहि । पूर्न सरूपा नंद करि ताहि ॥
प्रजा करत भई भेटहि ऐसें । रवि की भेट दीपक हि जैसें ॥
सब के फूले बदन प्रीति भरि । गदगद बानी भई प्रीति करि ॥
सुहृद कृष्न सों बोले ऐसे । बालक अपने पित सों जैसें ॥
अहो नाथ पदकमल तिहारे । नमस्कार है तिने हमारे ॥
जिनको बंदित बिधि नारद मुनि । सुख इछुकनि सरन तेई पुनि ॥
ब्रह्मादिकनि दंड जो धरे । सोऊ तहां काल प्रभाव न करे ॥
हे हरि तुमरी सेवा करि अब । कृत्य कृत्य हम होय चुके सब ॥
मात पिता पति तुम्ही हमारे । परम पूज्य पुनि गुरु अरु प्यारे ॥
ताते जग रछक सु मुरारी । हमको होहु सदा सुखकारी ॥
जामें प्रेम सहित मुसिकान । चितवन मांहि नेह सरमान ॥
ऐसो तुमरो मुख छबि पूरि । जाके दरस सुरन को दूरि ॥
ताको हम देखनि हैं अबै । हे हरि भए सनाथ सु सबै ॥
हे हरि तुम सुहृदनि देखनि जब । गए हस्तनापुर मथुरा तब ॥
इक छिन कोट बरष सम भई । कमल नैन तुम में मति छई ॥

बहुर अंधेर होय गयो ऐसें । रवि बिन होय द्रिगन कों जैसें ॥
सुनि प्रजानि के बचन मुरारी । भक्तन पर बत्सलता भारी ॥
चितै अनुग्रह कीनो सब पर । आए पुरी द्वारका श्रीहरि ॥
बृष्नि दसार्ह अर्ह मधु भोज । कुकुरांधक हरि की तुल ओज ॥
इन करि रचि द्वारका ऐसैं । भोगवती नागन करि जैसें ॥
सब रितु मैं द्रुम फूलैं जहां । छए लतनि के मंडप तहां ॥
बन उपबन क्रीड़ा गृह सोहैं । कमलनि जुत सरोवरी मोहैं ॥
उत्सव करि बहु बंदनवार । बांधी दरवाजनि अरु द्वार ॥
सुंदर धुजा पताका सोहैं । तिन करि भई छाया मन मोहैं ॥
हाट चौंतरा गली गल्यारे । आछी बिधि सों सबै बुहारे ॥
फल अरु फूल अंकुरित अछित । जल सुगंध भए राखे जित तित ॥
घर के द्वार द्वार जल भरे । स्वर्न के कुंभ मनोहरि धरे ॥
अछित फल दधि ईख सु धरी । धूप दीप पूजा बिधि करी ॥
प्यारे कृष्न सुने आवति जब । अति प्रसन्न बसुदेव भए तब ॥
उग्रसैन श्रीवलि बल पर । चारुदेस्न प्रदुम्न अक्रूर ॥
सांबहू जांबवती को तात । हरि आय सुनि फूले गात ॥
आसन असन सैन सब भूले । आगे कीने गज मद भूले ॥
उतम द्विज बर संग लिए पुनि । तुरही संखन की छाई धुनि ॥
है सब मुदित रथन चढ़ि लए । सनेह सो महा बिकलता छए ॥
हरि के सनमुख सब ही आय । बेद मंत्र सब ओरनि छाय ॥
बारमुखी बहु सोभा छाई । परी कपोलनि कुंडल छाई ॥
तेऊ संग ले लै असवारी । हरि दरसन को आई सारी ॥
नट गंधर्व गवइया धाय । मागध सूत बंदी जन आय ॥
ते हरि के चरित्र सुखकारी । गावत भए मनोहरि भारी ॥
तहां अहो पुरबासी जिते । सेवक अरु बांधव पुनि किते ॥
सभी सों मिलत भए भगवान । जथा जोग कीनो सनमान ॥
काहू को हरि सीस निवायौ । काहू के ले हाथ गहायो ॥

काहू कों बानी करि नये। काहू सो पुनि लपटति भये॥
काहू को हंसि के सुख दीनो। बानी करि कोऊ निरभै कीनो॥
काहू को दीनो बांछित बर। सुपच आदि यो सनमाने हरि॥
पुनि गुरु असत्रिन सहित द्विजन की। बंदी जन अरु वृद्ध जनन की॥
सब की ले आसीस मुरारी। जाते भए पुर में सुखकारी॥
हे सौनक जब हरि सुख पाय। राजमार्ग में निकसै जाय॥
तब कुल तिय दर्सन दुख मारी। दौरि दौरि चढ़ि गई अटारी॥
सोभानिध श्रीकृष्न मुरारी। तिनें द्वारका के नर नारी॥
जद्दिप सदा निहारौ करै। तऊ नैन प्यासेई मरै॥
लछमी जिनके उर में राजति। लोकपाल सब भुजन बिराजति॥
छबि अमृत सो भरौ बदन जो। नैननि को है पान पात्र सो॥
इनके चरन कमल रसधाम। मधुकरि साधन को बिसराम॥
हरि के ऊपर छत्र बिराजै। दोऊ ओर चबरन छबि छाजै॥
पीतांबर बनमाल धरे। ऊपर कुसमनि धारा परे॥
तब श्रीकृष्न भए सोभित यों। रवि ससि जुत तारें घन घन ज्यौं॥
कृष्नचंद्र महलनि में जाय। मिलति भए मातनि सुख पाय॥
देवकी आदि सात माता पुनि। तिनको सीस निवायो हे मुनि॥
तब हरि सबन गोद बैठाय। नैंनन के जल सों अन्हवाय॥
सनेह सो कुच बहु दूधहि श्रये। हरषि सो मन बिह्वल ह्वै गये॥
पुनि हरि गए आपने धाम। उत्तम सब निरवारे काम॥
सोरह सहस एक सो आठ। जहां पतनी महलन के ठाठ॥
ह्वै बिदेस हरि घर में आए। पतिन देखि बहुत सुख पाए॥
नैनन बदन पुनि लजित भए। और छोड़ सबरे ब्रत दए॥
तिह छिन सब हरि सनमुख आई। चित्त बृत्ति हू सनमुख धाई॥
हे सौनक हरि कों तिय जिती। पहिले मिली बुद्धि सो तिती॥
फेरि मिली नैनन सों जाय। महा गूढ जिनको भिप्राय॥
जदिप नैन जल रोकिहू लयो। तऊ बिकलता करि सौं श्रयो॥

जदिप कृष्न एकांतिहि पाय। रहे तियनि के ढिंग निज जाय॥
तऊ कृष्न के चरन रंगीन। छिन छिन माहि जु लगै नवीन॥
ऐसो को जु पगनि ते भजें। चंचल लछमी हूं नही तजै॥
भार रूप जे राजा धर पर। जिनको तेज बड्यो सेंना करि॥
तिनै परस्पर बैर कराय। बिन आयुध सब दिए गिराय॥
जैसे पवन आग उपजाय। सब बांसन को देत जराय॥
सो हरि अपनी माया करि कैं। प्रगटे नर सरूप को धरि कें॥
ललित तियन सों बिहरे ऐसें। मायिक जन कोऊ बिहरै जैसें॥
जिनके उज्जल सुंदर हांस। बड़े नाव को करै प्रकास॥
जिनकी लज्जित अवलोकनि करि। मोहित होय धनुप डारो हरि॥
ते उत्तम तिय कपटन को करि। कर न सकी बसु सुंदर श्रीहरि॥
ऐसे कृष्न असंगी आहि। लखै अबुद्धि संगी ताहि॥
अपनी सम मानुष करि माने। पुनि हरि को बिपई करि जाने॥
हरि को यह ऐश्वर्य कहावै। रहि तन तन के दुख नही पावै॥
जैसें बुद्ध हरि आश्रै रहै। हरि के गुन को नेकु न गहै॥
कृष्न सदा जिनके ढिग रहै। ते तिय हरि महिमा नही चहै॥
मूढनि हरि बस माने ऐसे। नर अहंकारी जीवहि जैसें॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानिकृते
एकदशोऽध्याय: ॥ ११ ॥

द्वादश अध्याय

दोहा—अस्थामहि दंडादि सब, पाय प्रसंग बखान।
जन्म परीछित भूप को, ध्याय बारहे जांनि॥

सौनक उवाच:-
अस्थामा ब्रह्मास्त्र चलायो। ताको तेज बहुत तुम गायो॥
तानें हत्यौ उत्तरा गर्भहि। श्री हरि जू राख्यो ता अर्भहि॥
सो नृप अति उदार बुद्धिमान। ताके जन्मरु कर्म महान॥
तिन तन छोड़ि हरि हि पाये ज्यों। अहो सूत हम सो कहिए त्यों॥

ताहि ग्यान सुकमुनि ने दयो। ताको जस सुनबे मन भयो॥
श्रद्धा जुत जो हमको जानों। अहो सूत तो हमें बखानों॥

सूत उवाच—

कृष्न चरन सेवा ही सो जब। धर्म पुत्र की चाह गई सब॥
सुख दे प्रजा सु पाली असें। पिता पुत्र को पालै जैसें॥
बिभो दीप जंबू को पायो। स्वर्ग लोक लो जस पुनि छायो॥
धन धरनी रानी अरु भैया। जग्य लोक जे मोद दिवैया॥
भोग देवतन को दुर्लभ जे। भए धर्म सुत को सुल्लभ ते॥
धर्म पुत्र हरि में मन लायो। ताते किनहु न सुख उपजायो॥
जैसें मरत भूख को मारयौ। माला चंदन ताहि न प्यारौ॥
ब्रह्म अस्त्र सों जरन लगे जब। हे मुनि नृपति परीछत जू तब॥
निज माता के गर्भ मझारी। लख्यो एक जन सुंदर भारी॥
निरमल औ अंगुष्ट प्रमान। ललित स्वर्न के कुंडल कान॥
ललित स्वर्न को मुकुट बिराजै। सोभन स्याम बरन छबि छाजै॥
बिजरी सम पीतांबर सोहत। सुंदर चार भुजा मन मोहत॥
लाल नैन करि गदा लियै पुनि। चारो ओर फिरै ये हो मुनि॥
जरत दंड सम गदा जु धरै। चारो ओर फिरावति फिरै॥
अस्त्र तेज निरवारो ऐसै। सूरज अहो औस कौ जैसै॥
ताहि परीछत निकट निहार। कौन आहि यह कियो बिचार॥
अमित प्रभाव धर्म पालक हरि। अस्त्र तेज कियो दूर गदा करि॥
अंतरध्यांन ताहि हरि भए। बालक देखत ही रहि गए॥
जब अनकूल भए ग्रह सबै। बाल गर्भ ते प्रगटे तबै॥
पांडू बंस धर प्रगटै जानौ। बली पांडू ही प्रगटै मानौ॥
धर्म पुत्र ने बहु सुख पाए। धोम्य कृपादिक बिप्र बुलाए॥
तिन पै मंगल बचन कहाए। पुनि सब जन्म कर्म करवाए॥
बालक जन्म तीर्थ नृप जानि। दए बहुत बिप्रन को दांन॥
अन्न सुबर्न मही गज ग्राम। दीने सुंदर घोरा धाम॥

अति संतुष्ट भए द्विजबर जब। नम्र युधिष्ठिर सो बोले तब॥
हे नृप यह जु पुर को बंस। दुरघट देव कियो निरबंस॥
तुम पै बहुत अनुग्रह कीनो। यह बालक सु बिष्नु ने दिन्यो॥
ताते बिष्नुरात यह नाम। सबसे प्रगटेगो अभिराम॥
अहो यह महा भागवत ह्वै है। पुनि याको जस सब ठां छै है॥

युधिष्ठिर उवाच—

हमरे बंस राजरिष भए। पुन्य चरित्र जिनके बहु छए॥
तिनको यह अनुबर्त्ती ह्वै है। जसरु साधुता तैसा पैहै॥

ब्राह्मण ऊचुः—

अहो यह प्रजहि पालिहै ऐसें। मनु को सुत इछ्वाक सु जैसें॥
सत्य प्रतिग्य द्विजन के पालक। ह्वै है जस दसरथ के बालक॥
जैसो सिबी भूप बिख्याता। यह तैसो सरनागति दाता॥
बंधु द्विजन को जस करिहै यों। सुत दुष्कुंत भरत नामें ज्यों॥
धनुष धरै इनमें बर ऐसें। हे नृप दोऊ अरजुन जैसें॥
अग्नि समान तेज कों धरिहै। पुनि यह बारिधि सम दुस्तरिहै॥
ह्वै है बली सु सिंघ समान। हिम पर्वत से सीतल जान॥
बहुरो सहनसील बसुधा से। दोष सहन को मात पिता से।
सिव ज्यूं तुरत प्रसन्न जु ह्वै है। बिबि ज्यों सब में समता कैहै॥
सबको आश्रय ह्वै है ऐसें। लछमीपति नारायन जैसें॥
उतम उतम गुन करि अहो। इनको कृष्न तुल्य ही लहो॥
रंत देव सो दाता ख्यात। धर्म ग्यानि में लहो जजात॥
पुनि प्रहलाद सरीखो अहो। कृष्न भजन में आग्रह लहो॥
धीर्जवान बलि की सम ह्वै है। पुनि बृद्धनि की सेवा कैहै॥
अस्वमेध बहु जग्य करहिगें। पुत्र राजरिष सब उपजहिगें॥
जो कोउ ऊधट मारग परिहै। तिनको दंड भली बिधि धरिहै॥
धर्म धरन को संवाद ही सुनि। कलिजुग को सुदंड दैहै पुनि॥
सच्छक प्रेर्यो श्रृंगी मुनिबर। ताते मीच आपनी सुनि करि॥

यह सब संपति को तजि जैहै। बहुरो हरि के पद कों पैहै ॥
व्यासपुत्र सुकदेव महामुनि। तिनते आत्म तत्व पैहै पुनि ॥
गंगातट मैं छोड़ि सरीर। निरभै पद पैहै हे बीर ॥
जन्म कर्म मैं बिप्र सुजान। ऐसैं नृप सो कियो बखांनि ॥
सब मैं सबै मनोरथ पाए। लै ले अपने घर को आए ॥
सुंदर पुरुष दृष्टि जो परे। ताकी यह परीछा करे ॥
सो यह जो मैं गर्भ निहारौ। ताते नाम परीछत पारयौ ॥
सो नृप पुत्र बढ़त भयो ऐसैं। सुकल पछ को चन्दा जैसें ॥
ससि होय पूर्न कलनि सौं जैसै। सुखनि सों भयो परीछत तैसै ॥
जात द्रोह कों चहै निवारयौ। अस्वमेध को करन बिचारयौ ॥
कर अरु दंड बिना ते धन जो। धर्म पुत्र देखो न कहू सो ॥
लखि भैया के मन की सब पुनि। कृष्नचद्र जूं की बानी सुनि ॥
उत्तर दिसा गए सब धाय। तहां ते परो द्रव्य बहु लाए ॥
ता कर मख के किए समाज। ह्वै संतुष्ट डरपि महाराज ॥
तीन सु अस्वमेध यग्यनि करि। जजत भयो नृप सुंदर श्रीहरि॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

त्रयोदश अध्याय

दोहा—गांधारी धृतराष्ट पुनि, बिदुर बचन सुनि कान।
जैहैं छाड़ि युधिष्ठरहि, ध्याय तेरहै जांनि ॥

सूत उवाच–

बिदुर तीर्थ यात्रा में पायो। आतम ग्यान जो मैत्रे गायो ॥
तासों सबै जानि कै हे मुनि। आवत भए हस्तिनापुर पुनि ॥
बिदुर प्रश्न मैत्रे सों किए। तिनने ताके उत्तर दिए ॥
भई बिदुर की हरि में रति जब। प्रश्न छोड़ि चुप होय गए जब ॥
कृपाचार्य संजय जु जुत्सु जुत। पुनि धृतराष्ट समेत पांडु सुत ॥

कुंती द्रुपद सुता गांधारी। कृपा सुभद्रादिक जे नारी ॥
औरौ तिया जाति की जिती। पुत्रनि सहित और तिय किती ॥
सब लखि उठे बिदुर को ऐसे। प्रानिनि आए इंद्री जैसे ॥
हे सौनक सब मिलि नारी नर। बिदुरहि सिर नायो आनंद भर ॥
बिकल बिरह उतकंठा छाए। प्रेम सो सबके दृग भरि आए ॥
बैठे बिदुर बिछोना पर जब। धर्म पुत्र पूजा कीनी तब ॥
भोजन ले बैठे आसन पर। श्रम सब जात रहौ आनंद करि॥
सबके सुनत नम्र अति राजा। बोले बिदुरहि सुख के काजा ॥

युधिष्ठिर उवाच—

बिषरु अग्नि ते बहु बिपतनितै। मात सहित हम तुम राखे है ॥
हम सब जीये पछ तिहारी। अब कबहूँ सुधि करत हमारी ॥
तुम धरि मंडल बिचरत अहो। कैसे करत जीवका कहो ॥
धरमें मुख्य तीर्थ है जिते। कहौ बिदुर तुम से ये किते ॥
अहो तुम से जे साध अनूप। तै तो आए तीर्थ रूप ॥
करै पवित्र तीर्थ से सारे। जिनके हिय मांही हरि प्यारे ॥
अहो बिदुर जे बंधु हमारे। जिनके कृष्न देवता प्यारे ॥
ते सब कुसल द्वारका मांही। तुम तो वे कहूँ दीखै नांही ॥
ऐसे धर्म पुत्र पूछी जब। तब श्री बिदुर कही नीके सब ॥
एक यादवनि को जो नास। सो न बिदुर ते कियो प्रकास ॥
जो दुख नरनि आप ते आवै। ते दयाल जन नाहि जनावै ॥
जाते जो जन दुःखित आहि। साधु नेंक सह सकत न ताहि ॥
पूजै सबन बिदुर ज्यौं ठाकुर। कोऊ दिना रहे ताही पुर ॥
सबको लें आनंदहि दियो। बड़े भ्रात को मंगल कियो ॥
जमहि श्राप मान्डव्य दियो जब। बिदु सूद्र तन यम धारयौ तब ॥
तबलौं पितर अर्जमा जोई। पापिन दंड देत रहौ सोई ॥
लख्यौ परीछत कुलधारी जब। धर्मपुत्र आनंद छये तब ॥
लोकपाल सम भैया प्यारे। बहु संपति करि हरषे भारे ॥

यो जिन धरनि मांहि मति धारी। गृह धर्मनि करि मत्त सुभारी ॥
तिनको दुस्तर काल आहि जो। हे मुनि बिना जानै बीत्यौ सों ॥
बिदुर जांनि ता कालहि लयो। पुनि धृतराष्टहि बोलति भयो ॥
हे नृप ह्यां ते बेगि पधारो। देखो भै आयो है भारो ॥
हे नृप यह जु काल अति दुस्तर। मिटै नाहि कबहू काहू करि ॥
भगवद्रूप काज यह जानौ। हम सब के ढिंग आयो मानो ॥
हे नृप जब सुकाल वह आवै। तब नर छिन में सब छिटकावै ॥
प्यारे प्रानन हू कों तजै। कहौ अब कहा धनादिक भजै ॥
पिता भ्रात सुत मित्र मरे जब। हे नृप तुमहू बृद्ध भए जब ॥
अब सब उद्यम थके तिहारे। तऊ बिराने गृह अति प्यारे ॥
नरनि बड़ी जीवनि की आस। तामें तुम हू करि बिस्वास ॥
भीम के दए पिंड को अैसें। खात द्वार पर कूकर जैसे।
जिनको अगिन दई बिष दियो। राज्यरु धन छिनाय सब लियो ॥
जिनकी तियनि दिए दुख महा। जिनके दिए अन्न करि कहा ॥
हे नृप कृपन जियो तू चाहै। मरिबे को नेंकु न अवगाहै ॥
तऊ इक दिन तन गिरहै अैसें। हे नृप बस्त पुरानो जैसें ॥
है बिरकत अरु तजि अभिमानै। बन मैं जाय न कोऊ जानें ॥
हरि भज बन में तन छिटकावै। सोऊ बृद्ध नर धीर कहावै ॥
आप ते अथवा और सु नर तें। लै बैराग जाय कढ़ि घर ते ॥
हिये सदा कृष्न को राखे। ताको शास्त्र नरोत्तम भाषै ॥
अब तुम उत्तर दिसि को जावो। हे नृप काहू कौ न जनावो ॥
फिर नृप दुस्तर काल आय है। सबके सबरे गुन मिटाय है ॥
छोटो भैया बिदुर जु आहि। यों तिन ग्यान दिखायो ताहि ॥
ग्यान नैंन तब ताके भयो। सब सो दृढ़ सनेह तजि दयो ॥
मारग दिखाय बिदुर नें दीनों। गमन अलख धृतराष्टर कीनो ॥
पतिव्रता सुसील गांधारी। पति को जात लख्यौ सुखकारी ॥
पतिही के पाछे गई सोऊ। गए हिमाचल कौ ते दोऊ ॥

तहां के दुखनि दए सुख अैसें। घाव सूर को रन में जैसें ॥
संध्या बंदन कियो युधिष्ठिर। अगिनहि होम द्विजन नायो सिर ॥
भूम सुवर्न गऊ तिल दए। धृतराष्टहि सिर नावन गए ॥
तीनों में एकोन लख्यौ तहां। गांधारी धृतराष्ट बिदुर जहां ॥
तहां बैठे संजय सुख काजा। तिनसो बोलौ ब्याकुल राजा ॥
बृद्ध आंधरे पिता हमारे। कहो इहां ते कहां पधारे ॥
पुत्र सोक करि पीड़ित माता। अरु हमरे काका सुखदाता ॥
मैं तो अहो मंद मति महा। मो मे कछु दोष लखि कहा ॥
ता करि दोऊ दुख को पाय। गिरे तौ नांहि गंग मैं जाय ॥
पांडु जब परलोक पधारे। तब हम सबै हुते अति बारे ॥
जिन हमरे बहु क्लेस निबारे। ते अब ह्यां ते कहां पधारे ॥

सूत उवाच—

संजय दुखित बिरह सो महा। बिकल नेह सो कहिये कहां ॥
जात लखे धृतराष्ट न जाते। संजय उत्तर दियो ना ताते ॥
फेर पूंछ आसू सब लए। बुधि करि मन कों थांभत भए ॥
धृतराष्ट के चरन संभारत। भयो युधिष्ठिर सो ऊच्चारत ॥

संजय उवाच—

हे नृप माता पिता तिहारे। हम नही जाने कहां पधारे ॥
हे नृप सु तो साध है महां। सोहू ठग गए कहिये कहां ॥
ताही छिन नारद मुनि आए। संग तबरु गंधर्बहि ल्याए ॥
नृप भैयनि जुत सनमुख गयो। पूजो नाय सिर बोलत भयो ॥
हे नारद वो पिता हमारे। हम नही जाने कहां पधारे ॥
पुत्र हीन ब्याकुल गांधारी। मैं नहीं जानो कहां पधारी ॥
क्लेस पार करिबे को अहो। खेवट तुमही ताते कहो ॥
मुनिन माहि उत्तम नारद मुनि। बोलत भये धर्म सुत सों पुनि ॥
हे नृप हरि के बस जग सबै। ताते सोच करो जिन अबै ॥
लोकपाल अरु लोक हैं जिते। हरि ही को बल बहुत हैं तिते ॥

सोई हरि सब नरनि मिलावै। पुनि सोई सबको बिछुरावै ॥
निगम जेवरी नाम फंदन करि। बंधे बहुत बलि हरि कों सब नर॥
जैसें रजु में बहु गलफंदे। बहुत धनी को बलि पसु बंधे ॥
जैसे बालक सवै खिलोनुनि। कभू मिलाय करै न्यारे पुनि ॥
ऐसे ही हरि सवै मिलावै। पुनि कबहू सबको बिछुरावै ॥
हे नृप जो नर को ध्रुव जानौ। अध्रुव अथवा दोऊन मानों ॥
तौ तुम सोच करन कों नाहिन। मोह तै भयो नेह इकता बिन ॥
हे नृप जो अग्यानहि आहि। भई मन व्याकुलता तजि ताहि ॥
मो बिन वे अनाथ क्यों जीहैं। हे नृप तजिये दुख्य नदी है ॥
काल कर्म गुन के आधीन। पंचभूत तन अहो प्रवीन ॥
सो औरन राखेगौ कैसे। अजगर गिल्यो पुरुष होय जैसें॥
हे नृप पसु घासदिक खांहि। मानुष पुनि पसुयन खा जांहि ॥
बड़े जीव खांहि छोटे जीवन। ताते जी की जीयही जीवन ॥
स्वप्रकास सर्वातम ईस हरि। भए अनेक भांति माया करि ॥
सबके बाहर भीतर राजै। देखि ताहि जग रूप बिराजै ॥
हे नृप सोई श्रीभगवान। काल रूप जग पालक जान ॥
आनि प्रगट धरनी में भयौ। असुरनि सो मारन मन दयौ ॥
देव काज लै सबरौ करौ। कछु अवसेष हिय में धरौ ॥
ईस्वर ह्यां बिराजै जौ लौं। तुमहूँ सवै बिराजौ तौ लौं ॥
गांधारी धृतराष्ट विदुर जे। दछन दिसा हिमाचल कीते ॥
हे नृप जाय प्राप्त भए अबे। जहां रिपिन के आश्रम सवै ॥
सात प्रवाह गंग जहां किये। जिन करि रिषिन बहुत सुख दिये॥
ताते ता गंगा को नाम। सप्त श्रोत यह है अभिराम ॥
असनान त्रिकाल जाय तहां किया। होमि अगनि जल ही को पियो॥
तिननि कियो निश्चल मन अवै। बहुरो तजी बासना सवै ॥
आसन जीति स्वास जीति पुनि। इंद्री छहो रोकि लीनी पुनि ॥
मैल तीन गुन की ही जिती। कृष्न ध्यान सों नासी तिती ॥

लिंग देह बुद्ध मांही धरी। बुद्धिहि एक जीव में करी ॥
सो लै ब्रह्म मांहि राखौ यौ। घट अकास आकास मांहि जौ॥
गई बासना प्रकृति मुनिन की। रोकि लई गति इंद्री मन की ॥
सब अहार तजि ह्वै रहै ऐसै। हे नृप ठूंठ बृछ कोऊ जैसें ॥
हे नृप कर्म तजे तिन सबै। ताहि न अंतराय होउ अबै ॥
दिन पांचवें आज तै ऐहै। तब धृतराष्ट देह छिटकैहै ॥
तन में अग्नि धारना धरिहै। ता करि कुटी सहित सो जरिहै ॥
पति कों जरत देख दुख भारी। तिही अग्नि गिरिहै गांधारी ॥
हे नृप धर्मपुत्र सुखकारी। विदुर देखि यह अचिरज भारी ॥
हर्ष साक दोऊ कौ पैहै। पुनि तहां तें तीर्थन को जैहैं ॥
धर्म सुतहि यो कहि के नारद। तुंवर जुत गये स्वर्ग बिसारद॥
तिनको बचन हिय धरि लियौ। धर्म पुत्र सोकहि तजि दियो ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजाति कृते
त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

चतुर्दश अध्याय

दोहा—अध्याय चौदह धर्म सुत, लखि उत्पात सभीत ।
अर्जुन कहिहै कृष्न के, अंतर्हित की बात ॥

कृष्नचंद्र के चरित निहारन। पुनि बंधुनि के देखन कारन ॥
अर्जुन जाय द्वारका छाय। सात मास हू में नहीं आय ॥
तब उतपात भयानक भारे। भूप युधिष्ठिर नें सु निहारे ॥
प्रथम काल गति उलटी लही। धर्म रितुन के पलटे सही ॥
पाप रूप बृत्तिहि नर धारै। क्रोध लोभ अति झूंठ उचारे ॥
कपट रूप देखो व्यौहार। छल सो मिल्यौ निहारयौ प्यार ॥
माता पिता तिया पति लरै। भैया सुहृद कलह अति करै ॥
ऐसे बहुत अमंगल देखै। लोभ अधर्म नरनि में पेखै ॥
भीमहि तब बुलाय ढिग लए। धर्म पुत्र पुनि बोलत भए ॥
कृष्नचंद्र के चरित निहारन। पुनि बंधुनि के देखन कारन ॥

मैं अर्जुन द्वारका पठायो। सात मास हूँ मैं नहि आयो ॥
अहो भीम मैं जानत नांही। किह हित रहे द्वारका मांही ॥
नारद जू जो काल बतायो। सोई कहा काल अब आयो ॥
जा जू काल में कृष्न जु ग्यान। करिहै रूपहि अंतरध्यान ॥
तन धन कुल सुत रानी राज। हमें मिलै ता हरि तें आज ॥
पुनि जा कृष्न कृपा ते अबै। बैरी जीत लिये हम सबै ॥
अहो अब ये दारुन उत्पाता। मेरी मति मोहत दुख दाता ॥
भूमि गगन के तन के जिते। ये उतपात होत हैं किते ॥
मेरे नैन भुजा ऊरू जे। पुनि पुनि सबै अंग फरकै ये ॥
और जु कंप होत हिय मेरै। देहै कछू दुःख ये नेरै ॥
स्यार बदन तें अगिन उगारे। सूरज सनमुख होय पुकारै ॥
स्वांन सबै मेरे ढिंग आवै। ह्वै निसंक रोय डकरावै ॥
मोहि मृगादिक बायो करै। गर्दभ आदि दाहिनें परै ॥
अरु मेरे घोरा है जिते। रोवत मैं देखत हो तिते ॥
अरु कपोत ये मृत्यु जनावै। कऊवा उल्लू मनहि कंपावै ॥
बुरे शब्द बोलत है ये सब। ऊजर जगत कियो चाहै अब ॥
दावानल घेरत सब लोक। गिरिन सहित कांपै धरि शोक ॥
दिसा धूंधरी ह्वै सब जात। गरजैं घन होय बज्र सुपात ॥
चले कठोर पवन कहै कहां। रज सों करि अंधियारो महां।
मेघ रुधिर की बरषा करै। स्वर्ग मभार देवता लरै ॥
भूत नरनि जुत धर आकास। अबै जरत सो करत प्रकास ॥
छोभित नदी नद सर मन भए। सूरज कांति हीन ह्वै गए ॥
बछरा मुख में थन नहीं लेत। गाय हूँ तिनै दूध नहि देत ॥
आग घीव हू सो नही जरै। कहौ काल यह कैसी करै ॥
गाय दृगनि ते आंसु बहावै। खरकनि विजरा हर्ष न पावै ॥
प्रतिमन के तन ते जल चलै। ढौर जांघ तजि रोवै भलै ॥
वन घर खान गांव पुर देस। इनमें नहि सोभा को लेस ॥

महा दुख पावत है अबै। ये कहा दुःख दिखैहै अबै ॥
उतपातन को कारन जो है। अहो भीम मैं जान्यौ सो है ॥
कृष्न चरन करि रहत भई अब। याते भाग हीन धरनी सब ॥
ऐसे देखि अमंगल महा। सोचति भूप होयगो कहा ॥
इतने नृप के सनमुख अर्जुन। द्वारापुर ते आए हे मुनि ॥
नृप चरननि में आय परे यूं। पहिले कबहू नाहि परे ज्यूं ॥
आतुर पुनि नीचो मुख करै। नैननि ते जल धारा परै ॥
कांतिहीन हिरदो कांपै पुनि। ऐसो लखौ अर्जुनहि हे मुनि॥
तब नारद को बचन बिचारत। भए भूप अर्जुनहि उचारत ॥
हे अर्जुन सातव मधु भोज। वृष्नुदसा हरि अंध अति ओज॥
ये सब जादव सुजन हमारे। सुख सो बसत द्वारका प्यारे ॥
सूर हमारे नाना अहो। तेऊ सुख सों हैं यह कहो ॥
अरु मामा बसुदेव हमारे। ताके भ्रात कुसल सों सारे ॥
पुनि बसुदेव तिया जे सात। सुतनि सहत सुख सों है भ्रात ॥
अरु तिनकी नारी सुखकारी। तिनके कहो कुसल है भारी ॥
उग्रसेन देवक को भ्रात। जीवत जास नीच हो तात ॥
सुख सो है अक्रूर जयंत। गद सारन हृदिकादि अनंत ॥
कृतबर्मारु शत्रु जित अहो। तेऊ सुख सों हैं यह कहो ॥
पुनि यदुकुल के प्रभु बलदेव। ते सुख सो हैं हे नरदेव ॥
महारथी प्रद्युम्न जु अहो। तेऊ सुख सो हैं यह कहौ ॥
पुनि अनुरुद्ध बड़े बलधारी। तेऊ कहो सुखी हैं भारी ॥
जांबवती सुत सांब सु सैन। चारुदेष्न पुनि आहि सुषेन ॥
कृष्नचंद्र के सुत नाती जे। कहो अहो सब हैं सुख सौं ते ॥
उद्धव श्रुतदेवादिक जिते। हैं सुख सों हरि अनुचर इते ॥
नंद सुनंद कुसल हैं अर्जुन। अरु जो जादव श्रेष्ठ तेऊ पुनि॥
हम सों जिनन प्यार बहु कीये। राम कृष्न की सुजनि सु जीये ॥
ते पुर मांहि कुसल हैं कहौ। कबहू हमे संभारत अहो ॥

पालक गोबिंद मुरारी । कृष्न भक्त बत्सल सुखकारी ॥
द्विज पालक गोबिंद मुरारी । सुहृदनि सहित सुखी हैं कहौ ॥
सभा सुधरमा में ते अहो । सुहृदनि सहित सुखी हैं कहौ ॥
जग के मंगल को बिस्तारन । जन पालन धन देन सुकारन ॥
मीत सेस के आदि पुरुष जे । जदु कुल समुद मांहि राजत ते ॥
हरि करि रछित द्वारापुरी । सभा यादवनि की जहां जुरी ॥
तहां सब सुख सों कीड़ति है यौं । हरि अनुचर बैकुंठ माहि ज्यौं ॥
सोरह सहस एक सो आठ । सतभामादि तियनि के ठाट ॥
जिनके हरिपद सेवन जोई । सब ते मुख्य कर्म है सोई ॥
ताही करि जु देवता जिते । जुद्ध मांहि जीतै हैं तिते ॥
जीत सकल्पदुमादिक जेई । सचीउ चित हरि लीने तेई ॥
कृष्न भुजन ही सों जीवन जे । अैसे निरभै यादव हैं ते ॥
इंद्रहि उचित सुधर्मा है जो । अपने बल करि लै आए सो ॥
तिही सभा को जादव सबै । चरननि करि रूंदत है अबै ॥
अहो भ्रात आनंद है तोहि । तेज हीन तू भासत मोहि ॥
बहु दिन रहे द्वारका मांही । भइ अवग्या तौ कहुँ नांही ॥
किधो कठोर बचन दुखदाई । तिन करि पीड़ा तौ नहीं पाई ॥
बस्तु देन कह जाचक को पुनि । नट तो नाहि गए हे अर्जुन ॥
अथवा बालक बृद्ध द्विज गाय । रोगी नारी नर दुख पाय ॥
रछक जानि सरन तुव आये । तिनके दुख तुम नांहि सराये ॥
उत्तम तिय को संग तजि दियो । किधो नीच तिय को संग कियो ॥
कै अधर्म करि मग के मांही । तोहि किनू हूँ जीतौ नांही ॥
कियो बाल बृद्धन नहि दियो । इकले तुम भोजन करि लियो ॥
अथवा तुमको उचित न जोई । निंद काम तुम कीनो सोई ॥
अथवा कृष्न बंधु अति प्यारे । तिन बिन रहित भए हम सारे ॥
सोई सोच करत तुम जाते । कांत हीन ह्वै गए सु ताते ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजाति कृते
चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पंचदश अध्याय

दोहा—ध्याय पंद्रहे मांहि नृप, कलि को देखि प्रकास ।
दे करि राज परीछत ही, आप गए हरि पास ॥

सूत उवाच—

कृष्न सखा अर्जुन सुखकारी । मीत बिरह करि पीड़त भारी ॥
बहु संका के उचित सरूप । अैसे ताहि कही जब भूप ॥
हृदै कमल सूक्यो सुखरासि । पुनि मुख को सब गयो प्रकास ॥
कृष्न चरन को ध्यांन करत पुनि । नहि दे सको उत्तरहि अर्जुन ॥
नीठ आसुवन थांभत भए । करि सो नैन पूंछ पुनि लए ॥
कृष्न बिरह सो प्रेम सु छयो । उतकंठा सों कातर भयो ॥
सुहृद स्वारथी सखा मीत हरि । पुनि पुनि ताहि को सुमरन कर ॥
गद गद ह्वै असुवा उमगाए । बड़े भ्रात को बचन सुनाए ॥
हे नृप कृष्न सु बंधु हमारे । ता बिन रहत भए हम सारे ॥
देवन दुःसहै तेज हमारे । ता बिन नष्ट भयो अब सारे ॥
इक छिन हू को तास बियोग । तासो नीके लगै न लोग ॥
जैसे प्रानी प्रान रहत जो । नेकु न नीको लागत है सो ॥
द्रुपद स्वयंबर में ये आए । राजा मनमथ के मद छाए ॥
तहा मैं सर सों छेद्यौ मीन । सब को तेज कियो पुनि छीन ॥
ता हरि ही को आश्रै करिकै । ल्यायो मैं सु द्रोपदी हरिकै ॥
निकट मात्र ही ते हम ता के । जीत देव सहित मघवा के ॥
पुनि खांडव बन अग्नि हि दयो । ता मैं मयहि राखि पुनि लयो ॥
ता ने मोहि सभा यह दई । मायामय रचना निरमई ॥
हे नृप तेरो जग्य भयो जब । सब दिस ते नृप बलि ल्याए तब ॥
बड़ो भ्रात जो भीम तिहारै । दस हजार हाथी बल धारै ॥
ताने कृष्न तेज कर मारो । जरासिंध जो दुष्ट हो भारो ॥
भैरों की बल देन सुकाजा । जरासिंध रोके जे राजा ॥
ते सबरे श्रीकृष्न छुटाय । तुमरे जग्य मांहि बलि लाय ॥

हे नृप तुमरी तिय के केस। श्लाघा लायक निपट सुदेस॥
जग्य माहि अबषेक किए जे। ल्याए दुष्ट सभा मैं गह ते॥
तियके दृगन मांहि जल भरो। तब तिन नीचन को बध करौ॥
तिनकी तिय भई बिधवा महा। कहो प्रताप कृष्न को कहा॥
दुष्टन हमरे घर पठइ पुनि। सब सिष्यन जुत दुरबासा मुनि॥
तिनते हमको क्लेस भयो जब। ते श्रीकृष्न तहां आए तब॥
आय साग के पातहि लियो। जल के संग पान सो कियो॥
जल में न्हात हुते मुनबर जे। मानत भए तृप्त त्रिभवन ते॥
जास तेज करिकै मैं रन मैं। अचरज उपजायो सिव मन मैं॥
सहित भवानी सिव रीझे जब। अपनो अस्त्र दयो मोको तब॥
याही तन करि स्वर्गहि गयो। आधो इंद्र आसन मैं लयो॥
गांडीवहि भुज धरै हमारी। कृष्न तेज करि अंकित भारी॥
तिने स्वर्ग मैं इंद्रादिक जे। वैरिन बध हित आन नए ते॥
उन श्रीकृष्ण बिना अब अहो। हीन भयो यह अर्जुन लहो॥
कौरव फौज समुद हे भूप। तहां भीष्मादि तिमंगल रूप॥
ताहि एक रथ करि मैं तरयौ। हरि नें मोहि बेधुलै करयौ॥
अरु जो नृप गायन ले गए। तिनको पुनि हम लावति भए॥
चीरा मुकट अमोल है जिते। नृप सीसन तैं लै लयो तिते॥
भीषम सल्य गुरु करन है जहां। छाए रथ भूपन के तहां॥
कृष्न देखि सबकी हरि लई। बल उत्साह आयु चतुरई॥
द्रोनाचारज कर्न अस्थामा। भीष्म त्रिगर्त्त जयद्रथ नामा॥
पुनि वाल्हीक सुसर्मादिक जे। जानत भए अमोघ अस्त्र ते॥
ते मोको छ्वै सके न ऐसे। अस्त्र सस्त्र प्रह्लादहि जैसें॥
हरि के चरन कमल सुख देत। साधु भजे मंगल के हेत॥
सो हरि हमनु स्वारथी करै। हम तो महां कुबुध सों भरें॥
मेरे घोरा हार गए जब। भूमि उतरि मैं जल प्यायो तब॥
हरि प्रभाव सो मोहित सब नर। नाहिन मोहि चलाय सके सर॥

हे नृप हरि जूं के परहास। जिनमें सुंदर हांस प्रकास॥
हे अर्जुन हे पारथ प्यारे। सुन कुरुनंदन बचन हमारे॥
ये हरि के जु बचन हितकारी। अछर महां मधुर हिय हारी॥
हे नृप सु जब सुमरन हम करैं। तबही हमरे मन को हरैं॥
सोवत बैठत चलत अरु खात। निज जस कहन समे हे भ्रात॥
बक्र बचन हम कहें सु भारी। तुम साचे हे मित्र मुरारी॥
अरु मेरे अपराध है जिते। कृष्नचंद्र नें सह लए तिते॥
सुत अपराधहि पिता सहै ज्यौं। मीत मीत के अपराधहि ज्यौं॥
सो पुरषोत्तम सखा हमारे। सुहृद अरु अति प्यारे सो प्यारे॥
हे नृप तिन बिन मैं अब भयो। पुनि मम हृदै सून्य ह्वै गयो॥
यह जु कृष्न को परि कर सबैं। ल्यावत मार्ग माहि मोहि अबैं॥
जीत तुच्छ गायनि लयो ऐसैं। हे नृप इंद्र अबला को ऐसैं॥
धनुष वेई पुनि बान है वेई। रथ अरु रथी अस्व पुनि तेई॥
तिनते सब नृप आन सु नए। छिन में हरि बिन बिफल सु भए॥
नेकहू फल नहीं दीनौ ऐसे। ऊसर में को बोयो जैसे॥
सबही व्यर्थ होय गयो ऐसो। राख होम बाग नट कैसो॥
हे नृप सुहृद द्वारका के जे। जिनकी तुमनि कुसल पूछी ते॥
बिप्र श्राप ते मोहित भए। मदिरा पीय मत्त होय गए॥
पुनि अजान से ह्वै गए आछै। लरत भए मूकिन सो पाछे॥
सबही अंतरहित तहां भए। चार पांच बाकी रह गए॥
हरि ही की लीला यह जानो। और कछु हिय में मति आनों॥
वेई परसपर सबको मारत। बहुर परसपर वेई मारत॥
जैसे जल मैं बड़े जीव जे। खाय जाय छोटे जीवन ते॥
हे नृप पुनि जो दुरबल आहि। खाय लेत है बली सु ताहि॥
बड़े बड़े जु परसपर खात। बली बली हू तौ खा जात॥
यो ही यादव बड़ड़े जिते। छोटनि को मारत भए तिते॥
बड़े बड़े जु परसपर लरे। बली बली हूँ त्यो ही मरे॥

बलि निरदलनि को पुनि मारे। ऐसे हरि धर भार उतारे॥
देस काल अर्थन सों सानी। हरै ताप नासक हरि बानी॥
जब जब नृप हम सुमरन करै। तब तब हमरे हिय को हरे॥

सूत उवाच—

गाढ़ प्रीति सों हे सौनक मुनि। सुख निध हरि के चरन कमल पुनि॥
ध्यान करत भयो अर्जुन जबही। उज्जल सांत बुध भई तबही॥
कृष्न चरन को ध्यांन कियो जब। अति ही भक्त प्रभाव बढ़ो तब॥
ताते बुद्ध मलिनता जिती। जात रही अर्जुन की तिती॥
रन में कृष्न ग्यान जो कहो। काल कर्म भोगन रुकि रहो॥
ताही ग्यान ही हे सौनक मुनि। प्राप्त भए श्री अर्जुन जुत पुनि॥
ब्रह्मग्यान करि सोक सु गयो। जगत रूप भ्रम नष्ट सु भयो॥
माया गुन लिंग देह नसायो। ताते पुनि पुनि जन्म बिलायो॥
हरि जादव अंतरहित भए। सुन के धर्म पुत्र मुरझाए॥
पुनि एकाग्र चित्त करि लीनौ। कृष्न निकट चलबे मन कीनो॥
अर्जुन कही जादव मुरारी। अंतरध्यांन भए सुखकारी॥
कुंती सुनि एकाग्र भक्ति करि। हरि में मन तबही दीनो धरि॥
बहुर भई जग ते उपराम। लेत ही लेत कृष्न को नांम॥
भार हरों जादव तन सों यों। कांटे को कांटे करि कै ज्यौं॥
पुनि ता तनही दियो छिटकाय। हरि के दोऊ समान सु आय॥
जैसे मत्सादिक बपु धरै। नट ज्यों फिर अंतरहित करै॥
जा करि भार दूर लै कियौ। कृष्नचंद्र सो तन तज दियो॥
श्रवन सुजोग कथा है जिनकी। भई अप्रगट देहि जब तिनकी॥
ता दिन कलजुग बरत्यौ भारी। जग्यन को सु अमंगल कारी॥
लोभरु झूठ कपट पुनि जामें। हिंसा बहुत अधर्म पुनि तामें॥
ऐसै कलिजुग देस घरन में। छायो नृप तन में नगरन में॥
लखि नृप बन को चलन बिचारौ। बन के उचित भेष ले धारो॥
पुत्र परीछत नम्र निहार। अपनी सम सब गुनन बिचार॥

समुद प्रजंत भूमि जा आहि। करि अभिषेक दई नृप ताहि॥
सूरसैन के देस हैं जिते। मथुरा में बज्रहि दए तिते॥
प्रजापत्य यग्य नृप कियो। अग्निहि मन में धार सु लियो॥
पुनि पट भूषन आदि हैं जिते। नृप ने छोड़ि दए तब तिते॥
हो मैं ताको नष्ट सु भयो। बहुरो सब संसै कटि गयो॥
इंद्री मन मैं मन सूं प्रान मैं। प्रानहि होमे लै अपान में॥
क्रिया समेत अपान जु आहि। मृत्यु मांहि लै होमौ ताहि॥
मृत्युहि लै सरीर मैं धरौ। गुनन संभार सरीरहि करयौ॥
माया मांहि गुननि धरि दए। माया जीव में करत सु भए॥
ब्रह्म जु निर्बिकार उच्चरयौ। सुद्ध जीव नृप ता मैं करयौ॥
फटे बसन भोजन तज दए। केस खुले मोनी पुनि भए॥
जड़रु पिसाच बावरो जैसें। फेरि दिखावत रूपहि ऐसें॥
बहुरे ह्वै गए सुने ना बानी। सब तज चले कृष्न मति सानी॥
पुनि नृप उत्तर दिस को गए। बड़ड़े साधु जात तहां भए॥
हरि को ध्यांन कर तहां गए। जहां ते कोऊ फिरत नहि भए॥
कलि को मीत अधर्म जु आहि। भूमि मोहि छायो लखि ताहि॥
सब भैयन ने निश्चै कीनो। निश्चै करि नृप को संग लीनो॥
सबने सबै तुच्छ करि जानै। कृष्न चरन इक उत्तम मानै॥
मन में धरै कृष्न सुखकारी। ताते बढ़ी भक्ति अति भारी॥
सबही सुद्ध बुद्ध ह्वै भई। कृष्न पगन ते मति लग गई॥
सब मालिन्य जात रहै पाछैं। उज्जल होय गए चित आछे॥
बिषइन को दुर्लभ है जोई। पाई अहो पांडवनि सोई॥
बिदुरहु हरि में चित्त लगायो। पुनि प्रभास में तन छिटकायो॥
तब सब पितर लैन आए मुनि। बिदुर आपने धाम गए पुनि॥
पुनि द्रोपदी आपनें मांही। चाहि पतिनि की देखी नांही॥
तब लगाय मति हरि मैं दई। हरिही को प्रापत सो भई॥
पांडु पुत्र हरि के सुखकारी। तिनको पुनि चरित यह भारी॥

सब मंगल को दाता आहि। सुनै प्रीति सों जो नर याहि॥
वाकी भक्ति कृष्न में होई। बहुरो सिद्धिहि पावै सोई॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
पंचदशोऽध्यायः॥ १५॥

षोड़श अध्याय

दोहा—कलि कर छीन धर्म धर, करत जहां संवाद।
तहीं परीछत जायहै, ध्याय सोरवें आदि॥

सूत उवाच—

सब विप्रन सिछा दीनी जब। भूप परीछत धर पाली तब॥
द्विजन जन्म में गुन कहे जे जे। विघ्नरात मैं आए ते ते॥
उत्तर नाम पिता है जाको। इरावती पुनि नाम है ताको॥
ताहि परीछत व्याह सु लाए। चारि पुत्र ता में उपजाए॥
कृपाचारज को गुरु करि वरे। तीन जग्य हयमेध सु करै॥
गंगा तट बहु दान सु दए। जहां सबै सुर आवत भए॥
कलि जु सूद्र नृप हगहि धारै। पग करि गऊ बैलन को मारै॥
देखि दिगविजै में नृप लयौ। निज बल तैं ताहि दंड सु दयो॥

सौनक उवाच—

नृप सरूप करि सूद्र जु आहि। पग करि गायहि मारत ताहि॥
दंड दिगविजै मैं नृप दयौ। मार ही कौन तास को लयौ॥
कृष्न कथा जो या मैं अहो। तौ यह सूत हमैं तुम कहो॥
अथवा जे हरि पद मकरंदहि। पीवत जिन साधुन की तौ कहि॥
औरि असाधुन की कहा बात। जा ते व्यर्थ आयु नर जात॥
महा जु अल्प आरबल जिनकी। मुक्ति मझार चाह पुनि तिनकी॥
तिनको ईस्वर मृत्यु जु आहि। मख में हमनि बुलायो ताहि॥
जा है अहो मृत्यु यह जो लौं। कोऊ नाहि मरैगा तौ लौं॥
ईस्वर रूप मृत्यु जो आहि। या निमित्त हम बुलई ताहि॥
ता ते हरि लीला अमृत जो। अहो विवेकी पान करो सो॥

जे आलसी मंद मति महा। अल्प आरबल कहिये कहा॥
वृथा कर्म दिन आयुहि हरै। रात्रि आयु निद्रा छै करै॥

सूत उवाच—

जब नृप कुरु जंगल में बसौ। कलि तब आय राज में धसौ॥
सुनिके सूर तनक सुख पायो। लेकर अपनो धनुप चढ़ायो॥
घोरा स्याम लगे जगमगे। सुंदर स्वर्न आभरन पगे॥
ता रथ पै सु परीछत चढ़ै। सिंह धजा फहरत छवि बढ़ै॥
चढ़ि के चले दिगविजै हेत। चतुरंगनी फौजै सुख देत॥
केतमाल भद्रास्वह भारत। उत्तर कुरु किंपुरुष इलावृत॥
पुनि रमनक हरि बरसहि रन में। जीत सबन बलि ल्याए अति सें॥
अहो परीछत जात है जहां जहां। सुनत पांडवनि को जस तहां तहां॥
जो जस कृष्नचंद्र ने करयौ। सो सब नृप के कर्ननि परयौ॥
पुनि अपनी रछा सुनि लीनी। द्रोन अस्त्र ते हरि जो कीनी॥
पुनि पांडवनि यादवन ने जो। करी मीताई भूप सुनी सो॥
हरि में भक्ति पांडवनि करी। सो नृप नीके काननि धरी॥
सुनि संतुष्ट परीछत भए। नैंन प्रीति सों विकल सु गए॥
जब उदार नृप कहिये कहा। दिए अमोल हार पट महा॥
नेही पांडव देखि मुरारी। भए सारथी अग्याकारी॥
सखा पारषद दूत भए फिर। अस्तुति करी बहुत नायो सिर॥
पाछै चलै पहरुवा भए। सुनि नृप रस में डूबत गए॥
भक्ति करी नृप हरि पद मांही। हरि सम त्रिभुवन में कोऊ नांही॥
पूर्व पांडवनि जो कछु कियो। ताही में नृप ने मन दियो॥
तुरतही एक भयो अचिरज जो। हे मुनि सुनो कान दै के सो॥
कांतहीन बछरा करि हीन। अस देखो नृप गाय नवीन॥
एक पाय को धर्म जु आहि। सुत की ज्यों बोलौ सो ताहि॥
देह तुम्हारो नीको अहो। हिय में कहां दुख्य सो कहो॥
जा ते मुख मलीन है महा। दूर गया को कोऊ बंधव महा॥

अथवा एक पांय को मैं जो। ता को सोच करत हौं तुम हो ॥
के तोहि सूद्र खांयगे अहो। सोचति सो यह हम सो कहो ॥
अथवा अहो जग्य रह गयो। ताके सोच मांहि मन दयो ॥
पै मेंघन तें जल नहीं परै। वाते सोच प्रजा को करै ॥
निरदै जन जिनको दुख धरै। पति अरु पिता ना रछा करै ॥
अैसी तियरु वाल जे अहो। तिने कहा तुम सोचति कहो ॥
के द्विज नीच जु पंडित महा। तिनको तुम सोचत हो कहा ॥
के भूपन करि दुखियत ग्राम। तिनको सोच करत हे भाम ॥
नीच नृपति उत्तम द्विज अहो। सेवत तुम सोचति सो कहो ॥
कलि करि व्यापित जे नृप महा। तिनको तुम सोचति हो कहा ॥
सैन पांन बसिबो स्नान। अरु जिनकै तिय संग प्रधान ॥
अैसे जे जु जीव है अहो। तिने कहा सोचति हो कहो ॥
हे माता अति भार जु आहि। प्रगटे कृष्न उतारन ताहि ॥
जिनके कर्म मुक्ति ते भारी। अंतरहित भए सोव मुरारी ॥
सुमरत तिनके कर्म जु महा। उनको सोचति हो तुम कहा ॥
हे माता हे धरनी अहो। अपनी जो पीड़ा सो कहो ॥
जाते तेरा तन कृस भारो। सुर पूजत सोभाग तिहारो ॥
काल बलीन में बली सु महां। सो सोभाग हरयौ तिन कहां ॥
धरोवाचः-
अहो धर्म मा सो पूछत जो। तुमही नीकै जानत हो सों ॥
सत्य छिमा संतोष सुधाई। सहनसीलता पंडितताई ॥
निर उपाव तप समता त्याग। दया सौच बल नवति बिराग ॥
सुमरन ईस्वर ता चतुराई। मन उत्साह तेज नरमाई ॥
तन बलभाग सरू। धीरता। थिरता सरधा जस गंभीरता ॥
ठांठा निरहंकार सूरता। इंद्रियन में नेपुन्य पूरता ॥
सम सो सील पूज्यता ग्यान। बहुरो दस स्वतंत्रता जानि ॥
ये गुन औार आदि गुन जिते। हरि में नित्त बिराजति तिते ॥

जो कोऊ साधु हुवा अब चाहै। इन गुन को नितही अवगाहै ॥
श्रीनिवास गुन खान जु आहि। एको गुन छोड़त नही ताहि ॥
जा हरि ते तेरे पग चार। रहत जनन सुख देत अपार ॥
अहो धर्म यह लोक जु सवै। रहित भयो ता हरि विन अवै ॥
पाप रूप गयो कलिजुग छाय। ताको सोच करत अब हाय ॥
हे देह उत्तम देव पितर मुनि। साधु वरन आश्रम समेत पुनि॥
आप सहित तुम को मैं भारी। सोचति बानी सुनो हमारी ॥
उत्तम करत है जिनकी सेवा। अैसे ब्रह्मादिक जे देवा ॥
ते लछमी के अवलोकनि को। बहुत काल सेवत भए बन को ॥
सो लछमी तजि के अपनो घर। सेवत हरि के पद अतिसै करि ॥
अंकुस कुलस धुजा अंबुज दर। इनसों ते सोहत अति सै करि ॥
तिन चरनन करि भूषित भई। ताते मो में अति छवि छई ॥
ता सोभा करि त्रिभवन जोई। हमन तुच्छ करि डारो सोई ॥
ता करि मेरे गर्व सु छए। ताते कृष्न छोड़ अब गए ॥
असुर बंस में नृप भए भारी। सैना सो धर छाय सु डारी ॥
ताकर हो बोझल ह्वै गई। तब ते हरि हलकी कर दई ॥
पुनि तुम दुखी जु तीन पाव करि। तिन पावन के सुद्ध करन हरि ॥
अपने बल करि सुभ सुखकारी। मूरत जादव कुल में धारी ॥
प्रेम सनो चितवन अरु हांस। निपट मनोहर बचन बिलास ॥
तिन करि गर्व अरु धीरज हरयो। सतभामादि तियन जो करयौ ॥
हरि चरननि करि अंकित हो जब। मेरे तन रोमांच होत तब ॥
अैसे श्री पुरुषोत्तम जौन। तिनको विरह सहारैं कौन ॥
सूत उवाचः-
पूर्व बाहनी सरस्बती जहां। धर्म धरन संबाद करे तहां ॥
तवही तहां परीछत आयो। सबने जिने राजरिष गायो ॥
इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
षोड़शोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सप्तदश अध्याय

दोहा–बली परीछत को कहन, बैरागहि सुख सान ।
ध्याय सत्रहै में कलिहि, कहत सू दंड बखान ॥

सूत उवाच:–
तहां नृप ने इक सूद्र निहारयौ । करि में दंड चिन्ह नृप धारयौ ॥
बैल गाय कों मारत अैसें । अहो अनाथ मारिये जैसे ॥
कमल कंद सो बैल ऊजरयो । महां दुखी इक पाव धू जरौ ॥
पुनि ताहि सूद्र दंड करि मारे । भै करि बैल मूत्र को डारे ॥
धर्म पूरना गाय जु दीन । रोवत लटी अरु बछरा हीन ॥
छूवित हि सूद्र पाव करि मारत । ताहि परीछत भयो निहारत ॥
स्वर्न जटित रथ माहि बिराजत । चढ़ो धनुष पुनि करि में राजत ॥
मेघ तुल्य गंभीर बचन कर । पूछत भयो सूद्र कों नृपबर ॥
जे जन निरबल सरन हमारी । बल करि तिनें हतत तू भारी ॥
बली आप को मारत अहो । कौंन पाप सों हम सों कहो ॥
नट ज्यों भूप भेष ले धरो । सूद्र कर्म ते सूद्र सु करौ ॥
दूर गए अर्जुन हरि जानि । निर अपराधन मारत आन ॥
हतिहो अब अपराधी तोहि । तेरो हतन उचित है मोहि ॥
एक पाव करि बिचरत हो अपु । कमल कंद सो उजरो तुम बपु ॥
बैल रूप करि देत हो खेद । तुम हो कोऊ देव कहो भेद ॥
कौरव भुज आश्रै है जिनकै । तुम बिन आसू परत न तिनकै॥
नृप को चिन्ह सूद्र यह धरे । अहो याते अब तू जिन डरै ॥
जिन रोवे माता सुखकारी । मैं हों दुष्टन को दंडधारी ॥
जास राज में नर दुख पावै । नीच लोग सब प्रजहि सतावै ॥
ता नृप सत्तहि जात है त्याग । कीर्त्ति आयु पपलोकरु भाग ॥
परम धर्म सोई नृप को आय । जाते दुखियन को दुख जाय ॥
मैं या सूद्रहि हतिहों यातें । निरदै अरु असाधु यह जाते ॥
हे सुरभी सुत कहो तिहारे । तीन पाव किन काट सु डारे ॥

हम हरि अनुवर्ती नृप जोई । तो सो मम न राज में कोई ॥
अहो बैल तोहि सुख होहु याते । निर अपराध साधु तुम जाते ॥
तुमरो रूप बिगारो जा नै । मम यस दुख्यित कीनो ता नै ॥
निर अपराधहि दुख्य देय जो । मो ते सब ठां डरपत है सो ॥
ताते अहो बैल जिन तोहि । दुख दियो ताहि बतावो मोहि ॥
निर अपराधी जन जो आहि । होय निरंकुस दुख्ख देय ताहि ॥
जो हो देव तऊ मैं तास । हरो पयेते भुज अनयास ॥
बिना आपदा ऊबट चलै । शास्त्रोचित ताहि दंडै भलै ॥
चले धर्म मैं पालै ताहि । नृप को परम धर्म यह आहि ॥

धर्म उवाच:–
पांडु बंसियन की बानी जो । सुखहि दे यह उचित अहि जो॥
जिनके गुनन सु देखि मुरारी । किय कर्म दूतादिक भारी ॥
हे राजा हम कहे सु कहा । जाते यह दुख होत है महा ॥
ताको हम जानत हैं नाहीं । मोहे बानी बेदन माहीं ॥
जे जन ईस्वर को नही माने । तें दुख सुख आपे ते जाने ॥
कोई दैवहि कोई कर्महि मानै । कोई नर सुभाव को जानै ॥
मन बानी ते दूर जु श्री हरि । मानत है ताको कोई नर ॥
ताते हे नृप जोग्य जु आहि । बुध सो तुमही बिचारो ताहि ॥
हे दुज अैसे धर्म कही जब । मन एकाग्र कियो नृप नें तब ॥
बहुरो खेद छोड़ि सब दियो । पुनि नृप धर्महि बोलत भयो ॥
हे धर्मग्य धर्म ते कह्यौ । बैल रूप तू धर्म सु लयो ॥
जा नर्कहि जु अधर्मी पावै । तहां अधर्म सूचक हू जावै ॥
अथवा देवनि की माया गति । नर मन बानी तें सुदूर अति ॥
तप सुचि दया सत्य ये भारे । अहो धर्म हे पाय तिहारे ॥
समय कुसंग मद तन अधर्म के । तिननि हरे पद तीन धर्म के ॥
सत्य पाव अब आहि तिहारे । ताते तुम बिचरत हो सारे ॥
कलिजुग महा अधर्मी आहि । कह्यौ चहत झूठ सो ताहि ॥

जब ते कृष्न उतारो डार ॥
पुन या धरनी को जो भार। तिन तैं धर भई मंगलकारी ॥
तब ते हरि पद सोभा कारी। सूद्र असाध भोग मोहि करिहै॥
द्विज द्रोही नृप चिन्ह ही धरिहै। भागहीन भई त्याग गए हरि ॥
ताको तू सोचत रोवत धर। यो बानी करि सांत किए सो ॥
महारथी नृप धरनि धर्म जो। तीछन खड़ग उठायो ताहि ॥
कलि अधर्म को हेतु जु आहि। कलि नृप चिन्ह तजि दियो तबही॥
मारन को जु भयो नृप जबही। नृप के चरनन में सिर दयो ॥
पुनि भै तें बिह्वल ह्वै गयौ। दीनन पर बत्सल अति धीर ॥
सरनागति पालक अति बीर। पुनि हंसि कै कलि सो ऊच्चारयौ॥
पावन माहि परयौ नही मारयौ। तिनके आगै करि जोरै जो ॥
जे अर्जुन के जसहि धरे हो। तू जिन रह मो देसनि मांही ॥
तिनको भै कछु होय सु नांही। जब तू नृप के तन में जाय ॥
हेत अधर्महि तूही आय। कलिही दुष्टता तजिबो धर्म ॥
तबही चोरी झूठ अधर्म। नृप के तन में आय रहत ते ॥
कपट दंभ दारिद्र आदि जे। जग्य करै या बिप्रन प्यारो ॥
धर्म सत्य जुत देस हमारो। तू अधर्म कारन ह्यां रहे जन ॥
जगिन करि जजिये हरि निस दिन। मेरे इहां पूजिये ताहि ॥
जग्य मूर्ति भगवान जु आहि। सबै मनोरथ पूरन करै ॥
सो हर सब को सुख बिस्तरै। सब में पवन बिराजत जैसै ॥
जड़ जंगम में राजत अैसै।

सूत उवाच:—

अैसे नृप कलि सो जब कही। कलिजुग कांप उठो तब सही ॥
जिनसों कहत भयो कलुजुग सो। खड़ग लिए जम सो ठाढो सों ॥
हे नृप सब ठां अग्या तेरी। जहां जहां देह बसे जां मेरी ॥
तहां तुमै तोही को देखत। कर मैं धनुष बान पुनि पेखत ॥
धर्मनि मांहि श्रेष्ठ तुम अहो। मोहि रहन कौ ठोर सु कहो ॥
जहां हो तेरी अग्या जांनि। निश्चै होय रहो सुख मांन ॥

अैसे कलिजुग ने भाषी जब। नृपने ताहि ठौर दीनी तब ॥
जूवा मद तिय हिंसा जहां। होत अधर्म चार बिध तहां ॥
फिर कलि करी प्रार्थना जबै। नृप ने स्वर्न बतायो तबै ॥
पांच प्रकार अधर्म जहां पुनि। बैर झूठ मदि काम रजोगुन ॥
बहुर अधर्म प्रभाव है आहि। पांच स्थान दिए नृप ताहि ॥
तब कलि नृप की अग्या मांनि। इन ठौरन में बसों सु आंनि ॥
जो नृप अपनो मंगल चाहै। सौ न कभू इनको अवगाहै ॥
धर्मसील जग पालक राजा। सोऊ इनसो बहु करै न काजा ॥
तप और सौच दया ये तीन। भए बैल के पग अति छीन ॥
ते ज्यों के त्यों करि धर को पुनि। समाधान करि पुष्ट करी मुनि ॥
धर्म पुत्र जब बन को गयो। तब नृप को नृप-आसन दयो ॥
नृपति परीछत ता आसन पर। राजत भए सहा हे मुनिवर ॥
कौरव संपति सोभित अति। महाराज रिषि राज भूमि पति ॥
महाजसस्वी बिष्नुरात जो। गजपुर में अब लों राजत सों ॥
श्रीअभिमन्यु भूप के बालक। बड़े प्रभावी जग के पालक ॥
ताके जग अर्थ तुम सब पुनि। दिछित भए अहो सौनक मुनि ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजाति कृते
सप्तदशोऽध्याय: ॥ १७ ॥

अष्टादश अध्याय

दोहा—ध्याय अठारहि नृपति को, श्राप बिप्र को होय।
तातै तिन बैराग्य दिय, ताते नुग्रह सोय ॥

सूत उवाच—

जो अस्थाम अस्त्र ते जरयौ। मा के उदर मांहि नहीं मरयौ ॥
जग में अद्भुत कर्म है जिनको। हे मुनि भयो अनुग्रह तिनको ॥
द्विज रिस करि तच्छक हि पठायो। ताते मृत्यु रूप भै आयौ ॥
तऊ भूप नहीं मोहित भयो। हरि में जाको मन लग गयो ॥
जब नृप सब को संग ले तज्यौ। श्रीसुकदेव सरन पुनि भज्यौ ॥

तिनते भगवत्तत्व सु पायो । पाय गंग तट तन छिटकायो ॥
जो नर हरि ही के गावै गुन । कथा रूप अमृत पीयै पुनि ॥
हरि के चरन कमल सुमरे जो । अंतहू समे न मै पावै सो ॥
सुत अभिमन्यु बिराज्यो जो लों । कलि ने कियो प्रभाव न तो लों ॥
हरि लोकहि तज दीनो जा दिन । छयो अधरमी कलिजुग ता दिन ॥
सारग्राही भ्रमर समान । नृपहि न मारयौ कलिजुग जांनि ॥
मन को पुनि होत कलि मांही । पाप होत मन को पुनि नांही ॥
कलिजुग अग्यानिन को सूर । धीरन सो डरपै रहै दूर ॥
सावधान यह बिसुधहि ऐसें । नरनि माहि ल्यारी है जैसै ॥
हे सौनक पूछी जो मोहि । सो मैं बरन सुनाई तोहि ॥
पुन्य चरित्र परीछत को पुनि । कृष्न कथा सो जुत बरनो मुनि ॥
कहेबे जोग कर्म है जिनके । गुन अरु कर्म आहि जे तिनके ॥
तिनको सुनन जोग्य है सोई । अपनो मंगल चाहै जोई ॥

ऋषय ऊचुः—

हे हे सूत साध सुखकारी । बड़ी आरबल होहि तिहारी ॥
जा ते मरनहार हम ये सब । हरि जस अमृत तिनै प्यावत अब ॥
बिन बिसवास कर्मन मन दए । धूमा सो जु मलिन ह्वै गए ॥
तिन हमको प्यावत रसकंद । हरिपद पंकज मधु मकरंद ॥
हरि संगिन को इक छिन संग जो । ता समान ही स्वर्ग मोच्छ हो ॥
और अहो राजादिक जिते । कैसे होय समान सु तिते ॥
माया गुननि रहित जो आहि । सबै महंत सु सेवत ताहि ॥
तास गुनन के अंत न लहे । सिवि बिधि जोगेस्वर जे कहे ॥
ताकी कथा मोहि अब अहो । कौन जु रसक तृप्त होय कहो ॥
अहो सूत हरि मुख्य तिहारे । तिंह जस सुनिवे चाह हमारे ॥
साधु जाहि सेवत नित अहो । जा हरि को चारित्र अपु कहो ॥
पाय परीछत सुक ते ग्यान । महा भागवत नृप बुधिमान ॥
हरि के चरन महा सुख रूप । तिहीं ग्यान सो पाए भूप ॥

ता ते बह भागवत पुरान । जो सुक नृप सो कियो बखान ॥
परम पवित्र अर्थ जहां भासै । कृष्नचंद्र के चरित्र प्रकासै ॥
अद्भुत जोग निष्ट जो आहि । साधुन को प्रिय कहिये ताहि ॥

सूत उवाच—

अहो बरनसंकर हम सबै । सुफल जन्म धारी भए अबै ॥
जा ते साधु नाम लेहि जा को । दुसकुल दुख्य जात रहै ताको ॥
शक्त अनंत अरु पाप अनंत । बहु गुन ते ताहि कहत अनंत ॥
ऐसे श्री भगवान जु आहि । सबै महंत सेवत है ताहि ॥
जो कोऊ उनके नामहि कहै । ताको दुख कुल कहां ते रहै ॥
हरि की सम न अधिक कोऊ आहि । ताके इतनेई गुन चाहि ॥
रमा चरन रज सेवत जिनकी । तामें चाह तनक नहीं तिनकी ॥
ब्रह्मादिक जु प्रारथना करै । तिनकी ओर नैन नहि ढरै ॥
जा जल करि बिधि हरि पग धोए । गंगा रूप बिराजत सो ये ॥
संकर सहित जगत तारै सो । हरि बिन हरि समान हैगो को ॥
धीरज वै ही रमे अनुरागै । तन में तै दृढ़ संगहि त्यागै ॥
परमहंस पदवी पावै पुनि । हिंसा रहित सांति जहां हे मुनि ॥
अहो मुनि तुमन हमे पूछी जो । तुम सो मत समान कहिहो सों ॥
पछी उड़े सु सक्ति समांनि । हरि लीला मैं कवि त्यों जांनि ॥
धनुष चढ़ाय एक दिन लयो । पुनि नृप बन सिकार कौ गयौ ॥
मृग के पाछे परो सु हारो । प्यासो भयो छुभित भयो भारो ॥
तहां नृप जल को ढूढ़त भयो । ढूंढ़त गृह समीक के गयो ॥
बैठे देखे तहां महां मुनि । सांत रूप द्रग मुदे जासु पुनि ॥
तीन अवस्था ते कढ़ि गए । मन बुध प्रांन इंद्री गहि लए ॥
होय रहे उपराम महां मुनि । निर्विकार ब्रह्महि सु पाय पुनि ॥
सिर की जटा सबै खुल रही । तन मृग चर्म ढपि रह्यौ सही ॥
नृप को कंठ सूकि अति गयो । पानी रिष पै मागत भयौ ॥
आसन भूम मधुर बानी करि । नृप सनमान कियो नहि मुनि बरि ॥

तव नृप आत्म अवग्या जांनि । कोप कियो अति ही दुख मांनि॥
छुधा प्यास करि पीड़त भयो । द्विज पै महा क्रोध भरि गयो ॥
नृप के मतसरता भई अैसी । पहलै कभू भई नहीं जैसी ॥
मग में मरयौ सांप इक परयौ । नृप ने धनुष अग्र पै धरयौ ॥
रिष के कंठ मांहि पहिरायो । पुनि नृप अपने घर को आयो॥
मोहि जानि रिष छत्री महां । या सो मोर प्रयोजन कहां ॥
जानि सु मिथ्या करी समाधि । नैंन मूंद इंद्री लई साधि ॥
ता को सुत तेजस्वी महां । लरकनि संग खेलत हो तहां ॥
पिता कंठ नृप सर्पहि डारयौ । सुनि कै तिन तबही उच्चारयौ ॥
अहो दुष्ट ये भए भूमि पति । इनकौ क्यौं नही लख्यौ पाप अति॥
दास देत स्वामि दुख अैसैं । रोटी खाय कूकरा जैसै ॥
द्विज के द्वार पाल छत्री ये । संग खानि को उचित सुक्यौं य॥
उपट गामिन दंड देय जो । अंतरध्यांन भए अब हरि सों ॥
तिनको दंड देत मैं अबै । मेरा बल देखो तुम सबै ॥
यो रिष सुत कहि रिस में छुए । ता सो नैन लाल हो गए ॥
नदी कोसिकी को अचवन करि । छाड़यौ बानी रूप वज्रबर ॥
कुल अंगार मो पित को द्रोही । तज दीनी मरजादा जोही ॥
दिन सातवा आज ते अैहै । मो प्रेरयौ तछक ताहि खैहै ॥
पुनि बालक अपने घर आयौ । सर्प कंठ में लखि दुख पाया ॥
पुनि शृंगी रिष पितहि निहार । रोवत भयो कंठ को फार ॥
बालक रुदन सुनो रिप जबही । हरे हरे द्दग खोले तबही ॥
मरौ सर्प रिष कंठ निहारयौ । कर ते ले सो धर पै डारयौ ॥
पुनि मुनि सुत सो पूंछी यही । कांहे तू रोवत है सही ॥
किन कीनो अपमान तिहारो । तब बृतांत कहो तिन सारौ ॥
नृपहि अजोग्य श्राप को रिषि सुन । पुत्रहि भलो नाहि मान्यौ मुनि॥
कहौ रे पाप अग्य तै कियौ । अल्प दोष बड़ दंडहि दियो ॥
हरि विभूत नरदेव जु आहि । नर की सम तू जानत तांहि ॥

जो नर दुस्तर तेजहि धरै । ता सो सबही रछा करै ॥
हे निरबुद्धि प्रजा भै नासै । पुंनि सबके मंगलहि प्रकासै ॥
नृप हरि ही की मूरति लहौ । अंतरध्यांन होय जब अहौ ॥
तब तौ चौर परचुर ह्वै जावै । तिन करि लोक नास को पावै ॥
रच्छक बिना भेड़ सब जैसे । ता छिन नष्ट होय जन अैसै ॥
नरपति नष्ट होयगो जबै । धनहि लूटि लैहै तब सबै ॥
सबही परस्पर आपहि दैहैं । त्यों ही मिल करि हिंसा कैहै ॥
पुनि बहु चोर लोक में ह्वैहै । पसु तिय धन की चौरी कैहै ॥
तिनते जो कुछ ह्वैहै पाप । लगिहै हमें आपते आप ॥
बर्नाश्रम के उचित जु आहि । कहै बेद में नीके ताहि ॥
सो सो मुख्य धर्म है जितै । ह्वैहै नष्ट नरनि के तितै ॥
धन अरु बिषै में चित्त लगैहैं । बरन संकर कूंकर ज्यौ ह्वैहै ॥
धर्मपाल नरपति जस धारी । पुनि राजरिषि भागवत भारी ॥
अस्वमेध बहु मख करि लए । छुधा प्यास सो श्रमित सु भए॥
दीन होय मो गृह आया जो । श्राप पायबे को अजोग्य सो ॥
निर अपराध दास जो आहि । कुमति बाल ने श्रापो ताहि ॥
छिमा करन को सो वह पाप । हे हरि एक जोग्य हो आप ॥
हरि भक्तन को वंचन करै । निंदा करै न पुनि आदरै ॥
तिरस्कार करि आपहि देत । सो वे अंगीकृत करि लेत ॥
जद्पि साध समरथो आहि । उलट श्राप तऊ दिहि न ताहि ॥
अैसै सुत अपराध कियो जो । ता करि जरत भयो अति रिषि सो॥
अपनोई अपराध बिचारयौ । नृप अपराध न नेक निहारयौ ॥
साधुन जो कोई दुख देत । साध तिने नहि मानि सु लेत ॥
सो वह आहि आतमा प्यारो । सो तो सुख दुख ते है न्यारौ ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजानि कृते
अष्टादशोऽध्याय: ॥१८॥



उनबिंश अध्याय

दोहा—अंसन ले नृप गंग तट बैठे सब जन आय ।
तहां ऐहै सुकदेव जु, येह उन्नीसे ध्याय ।।

सूत उवाच—

रिष पै मरो सरप धरि दियो । निंद कर्म यह नृप ने कियो ।।
सोचत नृप को मन दुख भीनो । कहै मैं नीच कर्म है कीनो ।।
गूढ़ तेज द्विज लिर अपराध । तासों हमने कियो असाध ।।
ता की मैं जू अवग्या करी । ता ते बड़ो दुख मोहि हरी ।।
तुरत ही होहु जाय अब जा ते । ऐसो मैं न करो फिर जा ते ।।
किए द्विजन को अग्नि सु अहो । मेरे धन बल राजहि दहो ।।
फिर जो ऐसी मति होय नांही । गाय देवता बिप्रन मांही ।।
ऐसो करो चिंतवन जबही । सुनी मृत्यु तछक ते तबही ।।
सो तछक रिषपुत्र पठायो । सुनि के नृप अति हरषहि पायो ।।
जो आसक्त घरन में आहि । देत मीच बैराग सु ताहि ।।
नृप ने दोऊ लोक तजि दए । पहिलै ही नस्वर मान सु लए ।।
नृप के हिय माहि हरि पैठै । अंसन ले गंगा तट बैठे ।।
कृष्न चरन तुलसी रज परी । ता ते गंग बहुत छबि धरी ।।
ता कर जल पवित्र अति धरै । सबही को पवित्र सो करै ।।
मरनहार ये पुरुष जु आहि । ऐसो कौन न सेवै ताहि ।।
ऐसी भांति परीछत राजा । अंसन ले बैठे सुख काजा ।।
सब ते संग सु छोड़त भए । कृष्न चरन हिय में धरि लए ।।
कृष्न बिना कछु और न जाके । मुनि समूह बैठा ढिग ताके ।।
करै पवित्र त्रिलोकी जिते । अहो महानुभाव मुनि तिते ।।
सिष्यनि सहित गए सब तहां । साधु परीछत बैठे जहां ।।
आए सबै तीर्थ मिस धरै । साधु पवित्र तीर्थनि करै ।।
भारद्वाज भृग च्यवन वसिष्ठ । बिस्वामित्र अंगिरा सिष्ट ।।
इंद्र प्रमद उतत्थ सरद्वान । कवख अगस्त ब्यास भगवान ।।

परसराम पारासर पिप्पल । रिष्टनेमि मेधातिथ देवल ।।
इध्वाबाहु मैत्रे नादे मुनि । अत्रिरु आष्टिषेन गौतम पुनि ।।
पुनि देवर्षि द्विजर्षि राजरिषि । आए अरुनादिक समेत सिष ।।
मिल मिल रिषि समूह सब आयो । सबै पूज नृप सीस निवायौ ।।
सुखहि पाय बैठे सबरे मुनि । राजा ने प्रनाम कीनी पुनि ।।
हाथ जोरि मन बस करि लीनौ । स्वाभिप्राय निवेदन कीनौ ।।

राजोवाच—

बिप्रन को पग धावन जहां । बैठन जोग नृपति ये तहां ।।
ता ते निंदक कर्म हमारौ । पै तुम कियो अनुग्रह भारौ ।।
ता ते अहो जिते हे नर पति । तिन में अब हम धन्य भए अति ।।
घरनि मांहि चित सदा हमारै । अरु हम पाप रूप है भारै ।।
द्विज को श्राप आप भगवानि । जिन बैराग दियो मोहि आनि ।।
बिषयनि मांहि रंग रह्यौ जोई । श्राप ते तांहि तुरत भै होई ।।
तुम मो को सर्नागति जानौ । गंगा हू सरनायो मानौ ।।
द्विज करि प्रेरौ तछक जोई । मोहि निरंतर खावो सोई ।।
अब मैं मन हरि माहि धरौ मुनि । तुम सब मिलि गावो हरिके गुन ।।
पुनि हरि मैं होहु प्रीति हमारी । होहु सदा सतसंग सुखकारी ।।
जा जा जोनि मांहि मैं जाऊं । तहां तहां मित्र साधु हि पाऊं ।।
नृप सब बिप्रन सीस निवायो । यो चित में निहचै उपजायो ।।
पुनि सब राज पुत्र को दयो । उत्तर मुख करि बैठत भयौ ।।
पूरब दिसा कुसन के मूल । आसन गंगा दच्छन कूल ।।
अनसन ले बैठे नृप जबै । स्वर्ग के माहि देवता तबै ।।
फूलन की बरषा बरषाई । श्लाघा करि दुंदुभी बजाई ।।
नृप ढिग आए है रिष जिते । श्लाघा करत भए पुनि तिते ।।
सब पै बहुत अनुग्रह जिनको । भलै भलै भयो बचन सु तिनको ।।
सुंदर कृष्न चरित करि सानी । सब रिषि तिनसो बोले बानी ।।

हे नृप हरि अनुबर्ती तुम सब। यह तुम में न कछु अचिरज अब॥
तुमरे कुल में जे जे भए। तिन हरि प्राप्ति मांहि मन दए॥
पुन राज आसन छोड़ दिए ते। नृप मुकटनि करि सेवत है ते॥
महा भागवत तन छिटकाय। सो करि हित हरि के पद पाय॥
तब लौं हम सब इकठा रहिहे। राजा की सब लीला लहिहे॥
अर्थ गंभीर कपटता नाही। मधु स्रावी समता जां मांही॥
अस विप्रन को बचन सुन्यो जब। सीस नाय नृप बोलि उठो तब॥
सुंदर कृष्न चरित जो आहि। सुनो परीच्छत चाहै ताहि॥
मेरे ढिग तुम हो सब असै। ब्रह्मलोक में श्रुति है जैसै॥
तुमरे कछु प्रयोजन नांही। बिन इक कृपा नरन के मांही॥
ता ते जो कछु उत्तम आहि। करि बिसवास ही पूछौ ताहि॥
मरन हार को करिबै है जो। करि विचार उत्तम कहिये सो॥
तबही तहां ब्यास सुत आए। लरकनि संग धूर में छाए॥
अति संतुष्ट चाह कछु नांही। बिचरे सदा धरनि के मांही॥
रूप न जिनको जानि सकै जन। सोरह बरस मांहि सुंदर तन॥
कर तन चरन भुजा छबि सार। षये कपोल जांघ सुकुमार॥
सुंदर नैन बिसाल बिराजै। कान समान महा छबि छाजै॥
सुंदर भृकुटी ऊंची नासा। मुख में नाना होत बिलासा॥
तीन रेख ग्रीव मैं असी। सोभा भरी संख मैं जैसी॥
भरयौ कंठ को नीचो सोहै। पुष्ट तुंग उर मन को मोहै॥
अति गंभीर नाभि छबि छाजै। त्रिबली सुंदर उदर बिराजै॥
दिसही जिनके अंबर सोहै। खुले कुटिल कुंतल मन मोहै॥
लांबी भुजा महा अभिराम। मानो सुंदर है घन स्यांम॥
अति ही सुंदर तन छबि छाजै। मंद मंद मुसिक्यान बिराजै॥
तिन करि सुंदर तिय मन हरै। गूढ़ तेज नहिं जानें परै॥
श्रीसुक को देखत भए जिते। आसन तजि सनमुख भए तिते॥

अतिथ रूप श्रीसुक गए आय। नृपने पूजे सीस निवाय॥
नृप ने श्रीसुक को पूजै जब। ऊंचे आसन पर बैठै तब॥
मूढ़ बाल तिय संग है जिते। अचिरज देखि भाज गए तिते॥
द्विज रिष सुर रिष नृप रिष ढेर। बैठे श्रीसुकदेवहि घेर॥
श्रीसुक सोभित तब भए असै। तारन मांहि चंद्रमा जैसै॥
सांत बिलास बुद्धि है जिनकी। आसन पै सोभा भई तिनकी॥
महाभागवत महाराज जो। पावन मांही जाय परो सो॥
हाथ जोर पुनि मधुरी बानी। बोल्यो श्रीसुक को सुखदानी॥
भए साधु सेवी हम आज। महा धन्य हे मुनि महाराज॥
कृपा करी तुम आप पधारे। तुम करि हम पवित्र भए सारे॥
साधु जनन को सुमरन है जो। करै नरन को घर पवित्र सो॥
जो जन इनको आसन देय। पांए धोय चरनामृत लेय॥
मिलि करि तिनको दरसन करै। ता को भाग कौन उच्चरै॥
तुम आए जु हमरे पास। हमरे बड़े पाप भए नास॥
जैसें हरि जब ही ढिंग आवै। तबही असुर नास कों पावै॥
कृष्न पांडवनि के प्रिय भारे। फूफी के बेटा अति प्यारे॥
तिनके बंस मांहि मोहि जांनि। मो पै कृपा करी तुम आनि॥
गति नहीं जानी जात तिहारी। नर दुल्लभ तुव दरसन भारी॥
अति दुल्लभ तुव दरसन ता कों। मरनों आए प्राप्त भयो जा कों॥
तुम सब के गुरु सिधि के दाता। मैं तुम सों पूछत इक बाता॥
मरनहार जो प्रानी आहि। करिबे जोग कहा मुनि ताहि॥
कहा जपैरू सुनै कहा करै। कहा भजै किंह ध्यांनहि धरै॥
जा जा को निषेद तुम अहो। सोई सो प्रभु मो सो कहो॥
गो दोहन लगि रहो न तहां। आधि गृहस्थन के घर जहां॥
सूत उवाच—
सुंदर बानी सों यो राजा। पूछी श्रीसुक को सुख काजा॥

व्यास पुत्र तब बोलत भए। अति धमग्य महा छबि छए॥
दोहा—श्री प्रियादास रस रास की, पाय कृपा रसजानि।
अगम कियो निपटै सुगम, प्रथम स्कंध बखानि॥
इति श्रीभागवते महापुराणे प्रथमस्कंधे भाषा रसजाति कृते
परीक्षितानुवर्ननो नाम एकोनविंशोऽध्यायः॥ १६॥



* श्रीगुरुगौरांगौ जयतः *

द्वितीय स्कंधः

प्रथम अध्याय

दोहा—रसिक भूप हरि रूप पुनि, श्री चैतन्य सरूप।
हृदै कूप अनुरूप रस, उमल्यौ बहै अनूप॥
श्रवन कीर्त्तनादिकनि करि, स्थूल रूप भगवान।
तामें मन ठहरात है, प्रथम ध्याय यह जान॥

शुक उवाच—
हे नृप प्रश्न श्रेष्ठ है भारी। सकल लोक कौ मंगलकारी॥
ग्यानवान के संमत है पुनि। सुनिबे की लायक तातैं सुनि॥
जो नर आतम तत्व नहिं जानैं। घर में अति आसक्तिहि ठानैं॥
हे नृप तिने हजारनि बात। सुनिबे जोग आहि बिख्यात॥
नींद रात की आयुहि हरे। कछु आयु छै तिय संग करै॥
दिन की आयु उदिम तै जाय। कुटंब भरन तैं कछु नसाय॥
तन सुत तिय परिकर हैं जितौ। यह नर नष्ट लहत है तितौ॥
तऊ मन नैकु न आवत यातैं। अति आसक्त ह्वै रह्यौ जातैं॥
सर्वोतम ईश्वर जो आहि। हे नृप जो नर चाहै ताहि॥
सो नर हरि सुमरन मन लावै। हरि कौ सुनेरु हरि कौ गावै॥
निज सुधर्म की निष्ठा करि जो। सांख्य जोग करि कै दूजै हौ॥
अंत काल में हरि को ध्यान। नर को जनम लाभ सोई जानि॥
हे नृप बहुतक मुनि जे आय। बिधि निषेध मारग छिटकाय॥
निरगुन माहि सदा रति जिनकी। हरि गुन कथन माहि मति तिनकी॥
हे नृप यह भागवत पुरान। सब बेदनि की आहि समान॥
हे नृप द्वापर जब ही भयौ। व्यास पिता तैं तब पठि लयौ॥
मोर ब्रह्म में निष्ठा भारी। हरि की ये लीला सुखकारी॥
तिननि खेंच मेरौ मन लयौ। तब मैं याहि पढ़त नृप भयौ॥
हे नृप तोहि कहौं मैं यातैं। हरि के भक्त आहि तुम जातैं॥

याहि सुनन में सरधा जाकी। हरि में तुरत लगै मति ताकी ॥
ग्यानी कामी मुक्ति ईछुक जो। हरि के नामनि कौं गावै सो ॥
अहो विसुध नर जीवै महा। तौ ता के जीवे करि कहा ॥
द्वै हूँ घरी बहुत है ता की। भलौ करन में मति है जा की ॥
इक खटांग नाम नृप भयौ। अपनौ जिन जीवन लखि लयौ॥
ज्ञान सु तब ही सब छिटकायौ। भै करि रहित हरिहि तिन पायौ॥
हे नृप तू जिन डरपै या तैं। सात दिवस तुव आयु है जातैं ॥
तब लौं सिध करौ तुम सोई। उचित आहि परलोकहि जोई ॥
अंतकाल जब नर कौ आवै। तब नर अति निर्भै ह्वै जावै ॥
तन सनबंधिन सौं जु नेह जो। लै बैराग्य सस्त्र काटै सो ॥
धीर होय घर कौ तजि जावै। पुन्य तीरथनि के जल न्हावै ॥
सुध इकांत ठौर जो होई। आसन करि बैठे तहा सोई ॥
सुध अछरी ओंकार जो। मन करि ताकौ जाप करै सो ॥
ओंकार कौ कभु न बिसारै। जीत स्वास मन बस करि डारै॥
बुधि सारथी जा कौ सो नर। खैंचि बिषै तैं इंद्रिनि मन कर ॥
कर्मनि करि बिछिप्त मन जोई। हरि में बुधि सौं राखै सोई ॥
चित इकाग्र करि हरि में लावै। एक एक अंगनि कौ ध्यावै ॥
बिषै रहित मन हरि में लावै। तिन बिन कछु न और मन ल्यावै॥
हरि कौ परम रूप है सोई। जामैं मन प्रसन्न अति होई ॥
रज तम करि बिछ्प्त मूढ़ जो। रोकि धारना सो लेय मन सो ॥
गुननि की करी मलिनता जितनी। दूर करै सु धारना तितनी ॥
मंगल रूप आश्रै हरि जो। जोगी लखै धारना तै सो ॥
तिनकौ जोग सिध होय तिह छन। जा जु जोग कौ भक्ति है लछन॥

राजोवाच—

अहो धारना का की करै। अरु कहौ ज्यौ सु धारना धरै ॥
जा धारन तैं मन मल जाय। सो मुनि मो सौं कहौ सुनाय ॥

श्रीशुक उवाच—
संगनि जीतरु जीतै आसन। इंद्रिन जीतरु जीतै स्वासन ॥
स्थूल रूप हरि कौ जो आय। बुधि सौं मन तहा देय लगाय ॥
हरि कौ तन बिराट है जोई। सब बड़ेन कौ बड़ौ सु होई ॥
ता में बिश्व देखियत है सो। भूत भविष्यत वर्त्तमान जो ॥
यह ब्रह्मांड सरीर बिराजै। सात आवरन जुत सो राजै ॥
ता मैं पुरष बिराट सु जोई। धारना आश्रै जानौ सोई ॥
हरि तरवा पातालहि जानौ। एड़ी अंगुली रसातल मानौ ॥
हरि के टकने हैं जु महातल। ताकी पिंडरी आहि तलातल ॥
सुतल सु ता के घोटु जानौं। अतल बितल दोऊ ऊरू मानौ॥
हे नृप जंघन महीतल ता कौ। नाभि नभ स्थल राजत जाकौ ॥
स्वर्ग लोक ता कौ उर मानौ। महर्लोक पुनि ग्रीवा जानौ ॥
बदन आहि जन लोक सु ता कौ। अरु लिलाट तप लोक है वाकौ॥
सत्य लोक पुनि मस्तक जानौ। हरि के कर इंद्रादिक मानौ ॥
दिसा आय नृप कर्न सु जा के। सब्द ही आय श्रवन पुन ता के॥
अस्वनी कुमार जु नासा जा की। गंध घ्रान इंद्री है जाकी ॥
ज्वलत अग्नि हरि मुख ही मानौ। अंतरीछ पुन नेत्रनि जानौ ॥
सुर्य चछु इंद्री है जा की। पलक परन दिन रात है ता की ॥
ब्रह्मलोक पुनि भृकुटी जानौ। जल ताल्ह रस जिह्वा मानौ ॥
ब्रह्मरंध्र नृप वेद है ता कै। जम ही डाढ़ बिराजत जा कै ॥
सृष्टि सु हौन कटाछहि जानौ। नेह रूप तिह दांत सु मानौ ॥
जननि देत उन्मतता जोई। हरि कौ हास है माया सोई ॥
लज्जा हौठरु अधर लोभ गनि। पीठ अधर्म धर्म है अस्तन ॥
लिंगही आहि बिधाता है जो। मित्राबरन है अंड कौस जो ॥
कुख समुद्र अस्थि गिरि जिते। नाड़ी नदी रोम द्रुम तिते ॥
पवन स्वास पुन काल है चाल। हे नृप यह संसार जु ख्याल ॥
मेघ रूप केसनि करि राजै। संध्या रूप ही बस्त्र बिराजै ॥

माया हदै रूप है ता कौ। बिकृति मेह ससि मन है जा कौ॥
महतत्व चित ही कौ मानौ। अहंकार सिवही कौ जानौ॥
खच्चर अस्व ऊट गिरि जिते। ता हरि के नृप नख है तिते॥
सब पसु आदि नितंब सु ताकौ। खग ही सुभ व्याकरन है वाकौ॥
बुद्धि स्वयंभूमनु पुनि मानौ। सब नर तास निवास सु जानौ॥
चारन विद्याधर गंधर्व। अप्सर ये हरि के स्वर सर्व॥
असुर समूह पराक्रम जा कौ। ब्राह्मन आदि बदन पुनि ता कौ॥
छत्री भुजा बैश्य जंघा पुनि। कृष्न बरन सोई सूद्र चरन सुनि॥
बहुत देवहु होम है जा कौ। ऐसा जग्य कर्म है ता कौ॥
बिस्व रूप हरि की रचना जो। हे नृप बरन सुनाई मैं सो॥
बुधि सौं मन जु थूल में धरै। हे नृप कछु न या तैं परै॥
एक सर्व आतम हरि जोई। सबन की बुधि बृत्ति करि सोई॥
अनुभव करि लीनौं सब ऐसें। स्वप्न में जीव बहुत ह्वै जैसे॥
सत्यानंद रूप हरि आहि। हे नृप सदा भजै नर ताहि॥
और ठौर पुन मन नहि लावै। जौ लावै तौ जगताहि पावै॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
प्रथमोऽध्यायः॥ १॥

द्वितीय अध्याय

दोहा--थूल धारना तें जु मन, जीत दूसरे ध्याय।
साछी सर्वेसुर हरी, ता में देय लगाय॥

शुक उवाच-

निश्चै बुधि सुफल है ग्यान। ऐसौ नृप जो ब्रह्मा आन॥
तिन लै यहै धारना धरी। नष्ट ग्यान तब दीनौ हरी॥
तव विधि जगत सृजत भयौ ऐसौ। हे नृप पहल हुतौ जग जैसौ॥
नरनि असार मार्ग जो कहै। वेद कौ सु है मारग यहै॥
ता मायामय मारग भीतर। बंधे चाह सो भ्रमत सबै नर॥
भ्रमैं सुपन सौ देखत तहां। कोऊ अर्थ नहि पावै जहां॥

जन नर बुधि में निश्चै कीनौ। पुन सो सावधान ह्वै लीनौ॥
सो नर तन निर्बाहि जितनौ। भोग करै अंगीकृत तितनौ॥
अनायास जौ आनहि परै। श्रमहि जान पुन जतन न करै॥
पृथ्वी रूप सेज यह राजै। भुजा रूप तकिया छबि छाजै॥
अंजुलि रूप पात्र ये तेरे। दिसा बकुल अंबर बहुतेरे॥
चीर कहा नाहिन मग मांही। भिच्छा बृछ देत कहा नाही॥
अहो नदी कहा सूकत भई। कहा गिरि गुहा रुकि पुनि गई॥
जे नर हरि की सरनहि धरै। कहा हरि तिनकी न रच्छा करै॥
धन करि जो नर अंध सु आहि। काहे भजत बिबेकी ताहि॥
आत्मा प्रिय भगवान हैं जोई। आप ते तब हिय आए सोई॥
ताहि भजै पुन सब छिटकावै। भजे सु यह जग नासहि पावै॥
पसु बिन ऐसौ हैगौ कौन। तजि हरि औरहि भजै सु जौन॥
सो नर बैतरनी में परै। जिन पापनि कौ अनुभव करै॥
कोई तरे जु धारना धारे। हिये मांहि इक पुरुष निहारे॥
जिनके चार भुजा छबि छाजे। चक्र गदाधर कमल बिराजे॥
कमलनैंन पीतांबर धारी। रतनन के बाजू सुखकारी॥
मुख प्रसन्न श्री रेखा राजै। कुंडल मुकटनि में छबि छाजै॥
फूल्यो एक कमल हिय जोई। ता पर राजत हैं हरि सोई॥
कौस्तुभ मनि जु कंठ में राजै। पुनि डहडही बनमाल बिराजै॥
छुद्र घंटिका नूपुर सोहे। मुदरी खंडुवा मन कौ मोहैं॥
स्याम स चिक्कन लट घुंघरारी। हसत बदन पर लसत है भारी॥
अति लीला करि हसनि सुहाई। अवलोकन तब अति छबि पाई॥
पुन ता में भृकुटनि बचावै। भृकुटि नचाय सु कृपा जनावै॥
या हरि कौ ध्यावै सौ तौ लौ। धारन करि मन थिर होय जौ लौ॥
एक एक अंगिन को ध्यावै। पद ते लै मुसिकनि लौं जावै॥
करि करि ध्यान अंगिन को तजै। पुन ऊपर ले अंगिन भजै॥
बुधि की होय सुधता जैसें। हरि कौ ध्यान करै सो तैसें॥

हरि में भक्ति होय नहि जब लौ। थूल रूप नर सुमिरै तब लौ॥
पुनि सब कर्मन हू कों करै। अरु मन की इकाग्रता धरै॥
जोगी जो तन छोड्यौ चाहै। देस काल नहिं मन अवगाहै॥
सुख सो दृढ़ आसन बैठै सो। प्रान जीत इंद्रिन रोकै हो॥
निर्मल बुधि सो मनहि हाथ करि। सो बुधि लै सु जीव में दे धरि॥
जीवहि लै आत्मा में धरै। आत्मा परमात्मा में करै॥
तब सुधीर आनंदहि पावै। अरु पुन सबै क्रिया छिटकावै॥
देवनि कौ प्रभु काल न जहां। जगत ईस तहां देव सु कहा॥
सत रज तम न तहां तीनौ गुन। महत्तत्व माया हंकार पुन॥
हरि में आहि सुहृदता तिनकी। गई अहंता ममता जिनकी॥
हरि के चरन हिये में धरै। असुध बस्तु कौ त्याग सु करै॥
हरि को परम स्थान जो आहि। ते सब साधु बतावत ताहि॥
भयौ शास्त्र ते ग्यान सु जा के। नष्ट बासना ह्वै गई ता के॥
परमात्मा में थित होय जोई। ह्वै उपराम अहो मुनि सोई॥
एड़ी गुदा के द्वार लगावै। पवन सात चक्रनि में ल्यावै॥
नाभि सु लाय हृदै में लावै। उर सु ल्याय तालू ठहरावै॥
भृकुटिन के मध्य ल्यावै जवै। सातो द्वार रोकि लेय तबै॥
एक मुहूर्त तहां ठहरावै। मन लै कृष्नचंद्र में लावै॥
ब्रह्मरंध्र को फोरै जोई। पार ब्रह्म को पावै सोई॥
ब्रह्मलोक जो देख्यौ चाहै। सुरनि की संपति मन अवगाहै॥
अष्टसिधि अनिमादिक जहां। तौ मन इंद्रिन लै जाय तहां॥
विद्या तप अरु जोग समाधि। हे नृप ये जिन लीनो साधि॥
पवन मांहि लिंग देही जिनकी। हे मुनि बाहर हू गति तिनकी॥
सो जोगी जा गति को जावै। कर्मी करि न कर्म ताहि पावै॥
त्याग मलिनता ऊज्वल होई। प्रथम अकास जाय के सोई॥
ब्रह्मलोक मग माहिं जाय सो। नाड़ी सुषुम्ना तेजोमय जो॥
ता करि अग्नि लोक कौ जावै। पुन सिसुमार चक्र कौ आवै॥

जगत नाभि हरि चक्र जु आहि। ताहू कौं जोगी तजि जाहि॥
सूच्छम निर्मल एक लिंग तन। ता करि महर्लोक जाय सो जन॥
दीर्घ आयु भृग्वादिक जहां। और न कोऊ पहुँचै तहां॥
पुन अनंत मुख अग्नि सु जवै। जारै बिस्वहि योगी तबै॥
जाय जु ब्रह्म लोक है जहां। सिधनि के बिमान बहु तहां॥
द्वै परार्ध की आयु सु ता में। सोक बुढ़ापौ मृत्यु न जा में॥
आर्ति और उद्वेग न जहां। मन की पीड़ा न व्यापै तहां॥
जन्म मरन बिमुखनि कौ जोई। देखि कृपालनि कौ दुख होई॥
पहले धर आवरन जु आवै। निर्भै ह्वै धर बपु तब जावै॥
जलावरन में जल होई सोई। तेज आवरन तेजसु होई॥
पवन में पवन होइ सो जावै। व्यापक नभ में नभ ह्वै छावै॥
घ्रान सो गंधरु रसना सो रस। दृष्टि सो रूप तुचा सो सपरस॥
श्रवननि सो सु सब्द को सोई। ऐसें प्राप्ति होई करि जोई॥
पुन कर्मेंद्रिन सहित सु सोई। तिन तिन की करि या गहै जोई॥
पंच हैं महाभूत पुन जोई। और पंच तन्मात्रा तेई॥
दस इंद्री मन देव सु जिते। लीन होय हंकार में तिते॥
ता में जोगी जाय समाय। ता जुत महत्तत्व में जाय॥
पुन सब गुन कौ लय है जा में। सो जोगी जाय ता माया में॥
माया रूप होय जाय जवै। आनंद रूप होय करि तबै॥
आनन्दमय परमात्मा जोई। ता कौ प्राप्ति होय है सोई॥
हे नृप जो या गति सौ जावै। सो न फेर जग मांही आवै॥
ये द्वै मार्ग वेद ने गाए। हैं अनादि मैं तोहि सुनाए॥
ब्रह्मा ने हरि पूजे जबै। श्रीभगवान कहे ये तबै॥
सुख मारग नहिं और है यातें। हरि में भक्ति होय है जातें॥
बिधि ने मन एकाग्र करि धारयौ। तीन वेरि तिन वेद बिचारयौ॥
बुद्धि तें निश्चै कीनो सोई। जा ते प्रीति कृष्न में होई॥
लखियत हैं सब जंतुनि भीतर। अंतर्यामी रूप करि श्री हरि॥

द्रष्टा हरिरु दृश्य बुध्यादिक । पुन तेई लछन अनुमायक ॥
ता तें मुक्ति हि चाहै जोई । सब ठां सदा सबै बिध सोई ॥
हे राजन हरि ही कों गावै । इहि कों सुनैरु हरि मन लावै ॥
साधुनि के हरि आत्मा आहि । जो नर श्रवन भरि सुनै ताहि ॥
सो चित अति पवित्र करि डारै । हरि चरनन के निकट पधारै ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
द्वितीयोध्याय: ॥ २ ॥

तृतीय अध्याय

दोहा—भक्ति श्रेष्ठता कहत श्री सूत तीसरे ध्याय ।
सुनि सौनक हरि गुननि में, करी प्रीति चित लाय ॥

शुक उवाच—

नरनि में बुधिमान जो आहि । मरन हार करिबे जो ताहि ॥
हे नृप तोंहि सुनायौ सोई । मो सें तें पूछ्यौ है जोई ॥
ब्रह्मतेज कौ चाहै जोई । ब्रह्मा जू को पूजै सोई ॥
जो कोई इंद्रिन को दृढ़ चाहै । इंद्र सु पूजन सो अवगाहै ॥
अरु संतानहि चाहै जोई । दच्छ प्रजापति पूजै सोई ॥
वैभव चाहै दुर्गाहि जजै । तेजहि चाहै अग्निहि भजै ॥
भजै वसुनि जो धन कों चाहै । रुद्रनि भजै प्रभाव अवगाहै ॥
अन्नहि चाहै अदितिहि जजै । स्वर्गहि चहै सुरनि को भजै ॥
राज्यकाम सो मनु पालनि कौ । प्रजा बस चाहै सो साध्यनि कौ ॥
आयु दीर्घ को चाहै जोई । अस्विनीकुमार भजै नृप सोई ॥
चहै पुष्टता सो धर भजै । चाहै रूप गंधर्बनि जजै ॥
बहुर प्रतिष्ठा चाहै जोई । धर अकासहि पूजै सोई ॥
तिय चाहै सु उर्वसी भजै । जस चाहै सो हरि कों जजै ॥
सब तें श्रेष्ठ हुवौ चहै जोई । ब्रह्मा जू को पूजै सोई ॥
जो जन धन कों जोरयौ चाहै । बरुन सु पूजन सो अवगाहै ॥
धर्म चहै तौ विष्नुहि जजै । विद्या चहै सु सिव कौ भजै ॥

तिय सो प्रीति चहै नृप जोई । भजै भवानी को नर सोई ॥
बंस बढ़ायौ चाहै जौ पै । पितरनि कौ पूजै नर तौ पै ॥
निर्भैता चाहै पुन जोई । पुन्य जनन कौं पूजै सोई ॥
नृप कौ मंत्री हुवौ चहै जो । विस्वेदेवनि कौं पूजै सो ॥
जौ काहू कौ मारयौ चाहै । मृत्यु सु पूजन तौ अवगाहै ॥
काम की आहि कामना जौ पै । जजै चंद्रमा कौ नर तौ पै ॥
पुन बैराग्यहि चाहै जोई । सुंदर हरि कौ पूजै सोई ॥
होय सकाम किवा निष्काम । अथवा जास मुक्ति सो काम ॥
सो नर परम पुरुष कौ जजै । तीव्र भक्ति करि ता हिय भजै ॥
हरि के पूजन में मन ता कौ । परम लाभ इतनोई ता कौ ॥
हरि भक्तनि कौ संग जु पाय । हरि में गाढ़ भाव ह्वै जाय ॥
असौ कौ जु हरि कथा मांहि । हे नृप करै प्रीति कों नाहि ॥
जा जु कथा में मन सुख पावै । सुखनि माहि तें पुन ऊठि जावै ॥
पुन नृप भक्ति योग होय सोई । मुक्ति के संमत मारग जोई ॥
गुन प्रभाव जा ते नसि जावै । असौ तबै ग्यान होय आवै ॥

शौनक उवाच—

यह सुनि नृप ने पूछयौ जोई । अहो सूत हम सों कहु सोई ॥
साधु सभा में होय हरिकथा । जिन कथानि कौ फलौ हरि कथा ॥
सो हम सुन्यौ चहत हैं सबै । कहन जोग तुम हमकौं अबै ॥
महारथीरु भागवत महा । पांडव बंसी कहियै कहा ॥
बालक समे खिलोना जिते । घंटा संखादिक किये तिते ॥
ब्यास पुत्र श्रीसुक हे जोई । कृष्न चरित्र मगन पुन सोई ॥
तिन हरि गुन कहे ह्वै हे जहा । बहुत भागवत बैठे तहा ॥
उदै अस्त रवि होंत है ज्यौं ज्यौं । नरनि की आयु सु काटत त्यौं त्यौं ॥
हरि कथानि में बीती जो छिन । ता की काटि सकै नहि सो छिन ॥
बृच्छ कहा जीवत है नाहीं । स्वास न कहा धोंकिनी माहीं ॥
बिषै करैंरु उदर जो भरें । सूकर कूकर हू सो करें ॥

माही । हरि कौ नाम गयौ कभुं नाही ॥
जो नर के कर्ननि के माही । हरि कौ नाम गयौ कभुं नाही ॥
खर कूकर सूकर हैं जिते । ता की स्तुति करत हैं तिते ॥
हरि गुन श्रवन सुने नहि जेई । सांपनि के जु बिले हैं तेई ॥
जो जिह्वा हरि गुन नहि गावै । सो जिह्वा मेंडुकी कहावै ॥
मुकट सहित सिर हरि हि न नयौ । तो सब जनौ बोझ धरि दयौ ॥
हरि सेवा कर करै न जौ पै । कंकन सहित मृतक कर तौ पै ॥
हरि सरूप निरखें नहि दृग जे । पांख मोर की सी राजत ते ॥
अहो सूत द्रुम चरन हैं तेई । जात नही हरि तीरथ जेई ॥
साधु चरन रज लेत न जोई । जीवत ही मृत्यु कहै सोई ॥
तुलसी गंध लेत नहि जेई । मरे मरे स्वास लेत हैं तेई ॥
कहत सुनत हरिनाम न जोई । दृगनि तें जल नहि डारै सोई ।
पुन रोमांच होत नहि जा के । लोह सो अति कठोर हिय ता के ॥
आत्मग्यान में निपुनि परीछत । पूछ्यौ श्रीसुक कौ सबही अति ॥
सो तुम हमसो सबै बखानौ । हमरे मन अनुकूल सु जानौ ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थ अध्याय

दोहा—हरि सृष्टादिक कर्म नृप पूछे चौथें ध्याय ।
बिधि नारद संवाद करि कहे सुकदेव सुनाय ॥

सूत उवाच—
श्री सुकदेव बचन जो कह्यौ । आत्म तत्व निश्चै जहा लह्यौ ॥
सोई बचन सुनि नृपति परीछति । सुंदर हरि में धर दीनौ मति ॥
देह पुत्र स्त्री धन धाम । गज घोरारु बंधु अभिराम ॥
अरु निष्कंटक राज्य माहि पुन । दृढ़ ममता तजि दई अहो मुनि ॥
हरि गुन श्रवन सु श्रधा भारी । अति उदार नृप अति सुखकारी ॥
श्रीसुक कौ पूछी तिन सोई । अहो साधु तुम पूछौ जोई ॥
अपनौ अंत जान नृप लयौ । धर्म अर्थ कामहि तजि दयौ ॥

हरि में गाढ़ भाव ह्वै गयौ । पुन नृप सुक सो पूछत भयौ ॥

राजोवाच—
हे सर्बग्य अनघ सुखकारी । कहत हरि कथा सुंदर भारी ॥
अति सुंदर पुन बचन तिहारौ । नास कियौ अग्यान हमारौ ॥
अपनी माया करिके श्रीहरि । जैसे बिस्व सृजत हैं मुनिवर ॥
ब्रह्मादिक कौ है अतर्क जो । तुमते मैं जान्यौ चाहौ सो ॥
बहुत सक्ति भगवान जु धरैं । का का सक्ति हि आश्रै करैं ॥
जैसें या बिस्वहि पालें मुनि । अरु संहार करैं जैसें पुनि ॥
अपनी क्रीड़ा हित कों सोई । बहुत रूप ब्रह्मादिक होई ॥
अद्भुत कर्मा को लीला जे । बड़े कबिन हू करि अतर्क ते ॥
माया के जु गुननि कौ श्रीहरि । एक बेर अथवा मुनि क्रम करि ॥
ग्रहन करे अवतारनि धरे । जैसे पुन कर्मनि कौं करें ॥
यह संदेह हमारें आहि । हे मुनि दूर करौ तुम ताहि ॥
सब्द ब्रह्म परब्रह्म जु आहि । नीकै तुम जानत हौ ताहि ॥

सूतोवाच—
हरि गुन श्रवन करन के काजा । सुक सों करी प्रार्थना राजा ॥
तब श्रीसुक मन हरि में दियौ । कहिबे कौ प्रारंभ सु कियौ ॥

शुक उवाच—
उतपति पालन प्रले हेत हरि । तीन रूप ब्रह्मादि लिए धरि ॥
लखि न सकै कोऊ मारग जिनकौ । अति ही आहि प्रभाव सु तिनकौ ॥
अंतर्यामी ईस्वर आहि । मेरे नमस्कार है ताहि ॥
साधुनि के जो क्लेस निवारे । दंड असाधुनि कों पुनि धारें ॥
ग्यान माहि पुनि थिति है जिनकी । इच्छा पूरन करत है तिनकी ॥
सत्व मूर्त्ति ईस्वर जो आहि । मेरे नमस्कार है ताहि ॥
दूर असाधुनि कौ मारग जा कौ । सुध रूप में रमन सु ता कौ ॥
बड़ी आहि ईस्वरता जिनकी । कोऊ नांहि समान है तिनकी ॥
साधुनि मांहि श्रेष्ठ जो आहि । मेरे नमस्कार है ताहि ॥

जा को पूजन श्रवन बिलोकनि। स्मर्न कीर्त्तन अरु पुन बंदन ॥
नरनि के पाप दूर करि डारै। सुक ताहि नमौ नमौ उच्चारै ॥
साधु जास पद में मन लावैं। पुन सब संग तिनकौ छिटकावैं॥
बहुर जास के निकट पधारै। हम ताहि नमौ नमौ उच्चारै ॥
धर्म निष्ठ दातारु तपस्वी। ग्यानी मनस्वी और जसस्वी ॥
जिंह अर्पन बिन सुख नहि लहे। ता कौं नमो नमो हम कहें ॥
खसिया हून किरात पुलिंद। कंक गवन आभीररु अंध ॥
पुल्कस आदि नीच जे आय। हरिभक्तनहि नवें जब जाय ॥
तब ही सुध होत है सबै। ता हरि कौं दंडौत है अबै ॥
ग्यानवान के आत्मा जोई। बेद धर्म तप रूप हैं ओई ॥
ब्रह्मा सिव निष्कपट जु आहि। जानन जोग आप ये ताहि ॥
पुन सब के ईश्वर हरि जोई। मो पर नित प्रसन्न होहु सोई ॥
लछमीपतिरु जग्यपति धीपति। धरपति लोकपतीस प्रजापति ॥
जादव पति साधुन की गति सो। होहु प्रसन्न हमारे पर जौ ॥
हरि पद ध्यान बिबेकी धरे। ता कर बुधिहि उज्वल करे ॥
सुंदर आत्मा तत्व देखे ते। मो पर होहु प्रसन्न सु हरि वे ॥
बिधि हिय सुच्छम बानी जोई। पहलै हरि पढ़ाय दई सोई ॥
बिधि मुख में ते प्रगट भई जो। होहु प्रसन्न मेरे पर हरि सो ॥
पंच महाभूतनि करि जो हरि। सृजत भए यह देह रूप धर ॥
अंतर्यामी होय बसे पुनि। करत प्रकास जिते षोड़स गुन ॥
सो हरि करौ अलंकृत सो सो। मैं यह कहत हों बानी जो जो ॥
कमल व्यास जू कौ मुख मानौ। यह पुरान आसव तिंह जानौ ॥
साधु ही ता कौ पान सु करें। व्यास चरन पर सिर हम धरें ॥
हे नृप यह बृतांत है जोई। नारद बिधि सो पूछयौ सोई ॥
नारद सों बिधि कहन लग्यौ सौ। नारायन सौ सुन्यौ हुतौ जौ ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पंचम अध्याय

ध्याय पांचए सृष्टादिक जे। नारद पूछे बिधि सु कहे ते ॥
बिराट सृष्टि हरि लीला कही। काज कर्म सक्तिनि जुत जुही ॥

नारद उवाच—

देव देव तुम पहले सब के। पुन उपजावनहार हौ सब के ॥
आत्म तत्व दर्सन होय जा करि। हम सो ग्यान कहो सो मुनिवर॥
जिन करि जगत प्रकासहि पायौ। जिन के आश्रे जिन उपजायो ॥
जा में लीनरु जास अधीन। ता कौ तत्व कहो प्रवीन ॥
भूत भविष्यत बर्त्तमान जो। तुम नीकै सब जानत हो सो ॥
ग्यान सो बिस्व बिचारयौ अैसें। हाथ में आहि आवरो जैसें ॥
को नें तुमै दियौ बिग्यान। कोनरु तुमकों आश्रै आन ॥
किंह आधीन तुम का कै रूप। या कौ हम सो कहो सरूप ॥
कोऊ न प्रभाव करै तिहारौ। इक ही तुम जु बहुत बपु धारौ॥
आपही अपनी ही माया धरि। पालत सृजत भूत भूतनि करि ॥
आपन सक्ति सोमकरी जैसैं। रचि जालो पुन खेलत तैसें ॥
ता ते हे प्रभु ईस्वर तुमहीं। यह निश्चै करि जानत हमहीं ॥
नाम रूप गुन करि जग माही। उतम मध्यम अधम जु आहीं॥
सूच्छम थूल जो कछु आहि। तुम बिन मैं नहि जानत ताहि ॥
सो तुम सावधानता धरौ। अतिहि घोर तपस्या करौ ॥
ता करि हमैं खेद उपजावौ। अन्येस्वर की संक करावौ ॥
हे सर्बग्य सकल के ईसुर। यह जो मैं तुम सो पूछी हरि ॥
पुन यह हम जु जान लेंय जैंसें। बरन सुनावौ सब तुम तैसें ॥

ब्रह्मोवाच—

अहो पुत्र यह प्रस्न तिहारौ। या ते है यह उत्तम भारौ ॥
ता ते कृष्न कथा के भीतर। मो को प्रेरयौ अहो साधुबर ॥
मो तें परे जु ईस्वर आहि। नारद तू नहि जानत ताहि ॥
मो को ईस्वर मानत ता तें। तुमरौ बचन न झूठौ या तें ॥

हरि जु तेज करि जग प्रकासैं। परकासे कों हम परकासे ॥
जैसें रबि ससि अग्निरु तारे। परकासे परकासैं भारे ॥
जा हरि की दुजय माया करि। मोहि कहत हैं जग गुरु नर वर॥
ता भगवान बासुदेव हि हम। करत हैं बार हीं बार नमो नम॥
जा करि मोहित नर अरु नारी। गहत अहंता ममता भारी ॥
सो माया अति लज्जा पावै। हरि के सनमुख जब ठहरावै ॥
कर्मरु काल सुभाव जीव पुन। पंच जे महाभूत नारद मुनि ॥
ते हरि ते न्यारे नहि कोई। सबके कारन हैं हरि सोई ॥
जग्य जोग तप ग्यान बेद पुनि। गति पर लोक देवता हे मुनि ॥
औरौ हें नारद मुनि जिते। नारायन पारायन तिते ॥
द्रष्टा निर्बिकार सर्बातम। ताकौ सृज्यौ बिस्व सिरजत हम॥
उनही में उपज्यौ हौ हे मुनि। उनहीं करि प्ररयौ हो मैं पुनि ॥
सत रज तम तीनौ गुन जिते। पालन सृजन प्रलै कौ तिते ॥
ग्रहन किये माया करि ते गुन। जे हरि माया गुन करि निर्गुन॥
महाभूत इंद्रीरु देव पुनि। इनहीं के कारन सु तीन गुन ॥
सदा पुरुष जो छूट्यौ आहि। माया संग सों बांधे ताहि ॥
जा हरि जू कौ तीन गुननि करि। तत्व न जान्यौ जात हे मुनिवर ॥
सो हरि सब के ईश्वर आही। मेरे ईस्वर जानौ ताही ॥
जगमायेस सृज्यौ चहे जबै। कालरु कर्म सुभाव सु तबै ॥
आप ही आय प्राप्त होय जोई। अपनी माया सों गहि सोई ॥
कालरु कर्म स्वभाव हैं जिते। ईश्वर ने प्रेरित किये तिते ॥
तिन करि गुन में छोभ जु भयौ। महतत्व जहां जन्महि लयौ ॥
रज सत दोऊ गुननि जुत जोई। लाग्यौ बिकरन महतत सोई ॥
तमगुन मुख्य भयो हंकार। ता के आहि तीन परकार ॥
सात्विक राजस अरु तामस पुनि। महाभूतनि में सक्ति है तमगुन॥
रजगुन की जु सक्ति इंद्रिन में। सतगुन सक्ति आहि देवन में ॥
भयौ बिकृत तामस हंकार जब। हे नारद मुनि भयौ अकास तब॥

ता कौ गुन जु सब्द है सोई। द्रष्टा दृश्य दिखावत जोई ॥
नभ बिकार पावन लाग्यौ जब। ता तें पवन सु प्रगट भयौ तब॥
प्रान ओज सह बल कारन सो। सब्द स्पर्श तास गुन हैं हो ॥
कालस्वभावरु कर्मनि तें जब। लाग्यौ होन पौन बिकृत तब ॥
भयौ तेज ताके हैं तीन गुन। सब्द स्पर्श रूप तीजौ पुनि ॥
तेज बिकार पावन लागो जब। जल रसमय ताते ही भयो तब ॥
ता जल में गुन चार जु भए। सब्द स्पर्श रूप रस छए ॥
जल बिकार पावन लाग्यौ जब। पृथी होत भई ता ते तब ॥
ताके पांच भए गुन मुनिवर। सब्द स्पर्श रूप रस गंध ॥
मन सात्विक हंकार तें जानौ। ताही ते दस देव सु मानौ ॥
रबि दिस पवनरु बरुन उपींद्र। अस्वनी प्रजेस मित्र अग्नींद्र ॥
बिकृत भयौ राजस हंकार जब। होत भई दसही इंद्री तब ॥
तुक जिह्वा दृग घ्रानो कान। भुजा चरन गुदा लिंगरु घ्रान ॥
ग्यान सक्ति असी सु बुधि पुनि। क्रिया सक्ति भए प्रान अहो मुनि॥
भूतेंद्री मन गुन हैं जिते। आपस मांहि मिले नहि तित ॥
तब ब्रह्मांड सरीर जु आहि। नेकु बनाय सकै नहि ताही ॥
तब हरि सक्ति सु प्रेरे सबै। मिल गए सबै परस्पर तबै ॥
माया के गुन अंगीकृत किये। छोटे बड़े देह रचि लिये ॥
सब मिलि जा अंडहि हो करयौ। बरस हजार सु जल में परयौ ॥
काल स्वभाव कर्म जुत श्री हरि। दयौ अचेतन कों चेतन करि ॥
सहस चरन ऊरु कर जिनकें। दृग मुख मस्तक सहस हैं तिनके॥
सोई परमातम आदि पुरुष हरि। न्यारे भए सु अंड छेद करि ॥
जा हरि के जु अंग हैं जिते। पंडित लोकनि बरनति तिते ॥
सात लोक नीच के हैं जे। कट्योदिक अंगनि करि के ते ॥
सात लोक ऊपर के जेई। ऊपर ले अंगनि कर तेई ॥
द्विजवर हरि ही कौ मुख जानौ। छत्री भुजा सु ताकी मानौ ॥
हरि के उरु बैस्य जु आही। सूद्र जु आहि चरन लहु ताही ॥

भूर्लोक हरि चरन बिराजै । नाभि में अंतरीछ पुनि राजै ॥
स्वर्गलोक हिय मांहि अहो मुनि । महर्लोक उर माहि लहौ पुनि ॥
हरि की ग्रीवा में जन लोक । दोऊ ओठनि में है तप लोक ॥
और है सत्यलोक पुनि जोई । हरि कौ मस्तक जानौ सोई ॥
पुनि बैकुंठ धाम जो आहि । नित्य सत्य तुम जानौ ताहि ॥
कटि में अतल बितल ऊरु पुनि । सुध सुतल जंघा में हे मुनि ॥
पिंडरी तलातल टंकने महातल । पुनि हरि चरन जु आहि रसातल॥
हरि तरवा पातालहि जानौ । अैसे जग मय हरि कौ मानौ ॥
चरन माहि है पृथ्वी लोक । नाभि माहि है भुवर सु लोक ॥
मस्तक में है स्वर्ग की रचना । अथवा अैसे लोक कल्पना ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते

पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

६ठ अध्याय

दोहा—छठे ध्याय बैराट की, कही बिभूति सुनाय ।
अध्यात्मादिक भेद करि, पूर्व उक्त दृढ़ आय ॥

ब्रह्मोवाच—
बानी अग्नि भए मुख तें मुनि । सात धात में सात छंद पुनि ॥
अन्न ते हव्य कव्य अमृत ते । पुनि सब रस जिह्वा ते भए ये ॥
पवन प्रान नासा ते भए मुनि । अस्विनी कुमार ओषदी जे पुनि॥
गंध सुगंध आहि पुनि जिती । भई घ्रांन इंद्री तें तिती ॥
चछु तें रूप तेज ह्वै गए । स्वर्ग सूर्य नैनन ते भए ॥
तीरथ दिसा कान तें भए मुनि । सब्द अकास श्रवन इंद्री पुनि॥
बस्तु सार सौभग हैं जिते । हरि अंगनि में रत है तिते ॥
पवन स्पर्स अरु जग्य हैं जेई । हरि की तुच तें प्रगटे तेई ॥
हरि के रोम बृच्छ ये सबै । जिन करि जग्य सिध होंय अबै॥
बहुर केस डाढ़ी नख जिते । बिजुरी मेघ सिला हैं तिते ॥
सबके रच्छक नृप हैं जेई । हरि भुजानि ते प्रगटे तेई ॥

मंगल अभै और भू लोक । पुनि आकास और सुर लोक ॥
सबै मनौरथ पूरन करन । हे मुनि निस्चै हैं पग धरन ॥
जग आनंद बीर्य बिधि जिते । बिष्नु सिष्नु तैं उपजे तिते ॥
सुत उपजावनि में सुख जोई । भयौ उपस्थ इंद्री ते सोई ॥
यम मल त्याग मित्र है जो मुनि । भयौ पायु इंद्री ते सो पुनि ॥
हिंसा मृत्यु नर्क दरिद्राई । गुदा स्थान तें भई यों गाई ॥
हारिबौ अरु अधर्म अग्यान । ये हरि की सु पीठ ते जांनि ॥
नद अरु नदी जु नाड़ी जानौ । अस्थि समूह सु पर्बत मानौ ॥
नरनि कौ नास समुद रस माया । इंनो नें उदै उदर तें पाया ॥
मन कौ स्थान हृदै हरि कौ पुनि । सनकादिक कौ अरु तुमरौ मुनि॥
मैं सिव धर्म सत्व बिग्यान । इनकौ हरि कौ चित है स्थान ॥
हम तुम तुमरे भ्राता जिते । सिव सुर असुर नाग नर जिते॥
खग मृग सर्प भूत पसु जच्छ । पितर सिध बिद्याधर रच्छ ॥
चारन द्रुम गंधर्ब अप्सरा । जल थल नभ बासी जु सुर नरा॥
ग्रह नछत्र बीजुरी तारा । घन गरजन यह हरि ही सारा ॥
भूत भविष्यत बर्त्तमान जो । हे मुनि यह सब हरि ही है सो॥
जा करि बिस्व की व्याप्त जानौ । इक बिलांद हरि न्यारे मानौ ॥
रबि मंडल प्रकास के जैसें । बाहर हू परकासै तैसें ॥
अैसें हरि देहनि परकासे । पुनि अंडही सब ओर उजासें ॥
मरन धर्म तें न्यारे हे मुनि । कर्मन कौ फल परसत नहि पुनि॥
परमानंद अभै दाता जो । ता की यह महिमा दुस्तर हो ॥
हरि के अंस लोक ये सबै । तिनमें प्रानी बसत हैं अबै ॥
उपर तीन लोक ये भाषे । अमृत छेम अभै तहां राखे ॥
तीन स्थान त्रिलोकी बाहर । ब्रह्मचारी आदिक के तहां घर ॥
ब्रह्मचर्य ब्रत जाकें नाही । सो तौ रहत त्रिलोकी माही ॥
अविद्या जुक्त जीव है जोई । चलै भोग मारग में सोई ॥
जो जिय बिद्या जुक्त है हे मुनि । मुक्ति मार्ग में चलति है सो पुनि॥

जा हरि तें ब्रह्मांड यह भयौ । सो बिराट पुनि जग ह्वै गयौ ॥
भूतरु इंद्री गुन हैं जिते । या बिराट में लखियत तिते ॥
दोऊ प्रकास करि न्यारे ऐसें । किरननि करि प्रकास रबि जैसें ॥
ताही हरि की नाभि कमल तें । हे नारद मुनि प्रगट्यौ जब मैं ॥
तब ता हरि के अंगनि बिन । लखी जग्य सामग्री नाहिन ॥
कुस पुनि काष्ट जग्य की धरनी । मख पसु पुनि रितु बहु गुन करनी॥
पात्ररु औषध बहु गुन सानी । घृत रस लोह मृत्तिका पानी ॥
बेद चतुर्होतादिक कर्म पुनि । जोतिष्टोम नाम स्वाहा मुनि ॥
मंत्र दंच्छिना ब्रत हैं जोई । देवनि कौ उद्देस है सोई ॥
कर्म सास्त्र संकल्प विचार । कर्म करनि कौ जौ परकार ॥
प्रायश्चित्त सुरनि कौ ध्यान । कर्म समर्पन फल पुन आनि ॥
हरि अंगनि में है ये सबै । तिन करि सिध करी मैं अबै ॥
हरि के अंगनि करि मुनि जबै । करी सिध सामग्री सबै ॥
तिन करि जग्य पुरुष जो आहि । हे मुनि मैंने पूज्यौ ताहि ॥
पुनि तेरे नव भ्राता जिते । सावधान पूजत भए तिते ॥
मुनि रिषि पितृन देवता जिते । दैत्य मनुष्य औरहू किते ॥
काल काल में जग्यनि करि करि । पूजति भए तिनही को मुनिवर ॥
नारायन भगवान विराजत । यह सब जग ताही में राजति ॥
निर्गुन सृष्टि करन के हेत । माया के जु गुननि गहि लेत ॥
ता कौ प्रेर्यौ करत हो मैं मुनि । ता के बस सिव नास करत पुनि॥
त्रिगुनी माया धारे जोई । विष्नु रूप करि पाले सोई ॥
अहो पुत्र पूछ्यौ हो ते जो । तो सों बरन सुनायो मैं सो ॥
कारज कारन लखियत जितौ । हरि ते न्यारौ नेकु न तितौ ॥
बानी मेरी मिथ्या नाही । इंद्रि न जांहि कुमारग माही ॥
मन की गति मिथ्या नहि याते । धरे हिय में हरि मैं जातें ॥
बेद सरूप तपौमय मैं मुनि । प्रजापतिन करि पूजत हो पुनि ॥
सावधान ह्वै ध्यान लगायो । ता तैं जनम्यौ सो नहि पायौ ॥

निज माया बिस्तार है जोई । हरि न लखें अकास लौं सोई ॥
ता के चरन परम सुखकारी । साधु क्लेस नासक पुनि भारी॥
पुनि तिन में मंगल बहुतेरौ । ता कों सीस नवति यह मेरौ ॥
हम सिव ता कौ तत्व न जानें । कहौ ये सुर कहा तें पहचानें ॥
माया मोहित बुधि हमारी । माया रचित सृष्टि यह सारी ॥
हमरौ ग्यान आहि मुनि जितौ । ता समान जग लहत हैं इतौं ॥
ता हरि के अवतार कर्म जे । गान करत हैं हम सबरे ये ॥
पै नहि हम जु लखि सकें ता कों । हमरे नमस्कार हैं वा कौ ॥
सोई अजन्मा आदि पुरुष हरि । कल्प कल्प में आये हीं करि ॥
आपही आप में आपन कौ मुनि । सृजें पाल संहार करे पुनि ॥
केवल ग्यानरूप हैं जोई । सब में बिराजमान हैं सोई ॥
अतही सुध सदा थित पूरन । संदेहादि रहित पुनि निर्गुन ॥
सत्य रूप पुनि नित्य बिराजै । आदि अंत नहि ता कौ छाजै ॥
हे नारद अद्वै जो आहि । है यह तत्व लहें मुनि ताहि ॥
तन मन अरु इंद्री हैं जिती । होय प्रसन्न तबै मुनि तिती ॥
असत कुतर्क करें मुनि जबै । अंतर्धान होय सो तबै ॥
व्यापक प्रकृति के प्रेरक जोई । आद्य अवतार लहौ मुनि सोई ॥
काल स्वभाव थूल सूछम पुनि । महत्तत्व महाभूत सबै गुन ॥
अहंकार इंद्री बिराट पुनि । अरु बिराट अंतर्यामी सुनि ॥
अरु थावर जंगम हैं जोई । हरि अवतार लहौ मुनि सोई ॥
हम सिव विष्नु और दच्छादिक । तुमरु स्वर्ग पालक इंद्रादिक ॥
अंतरीछ के पालक हैं जे । धर पताल रच्छाकारी जे ॥
बिद्याधर गंधर्बरु जच्छ । चारन उरग नाग पुनि रच्छ ॥
रिषि अरु पितर सिव पुनि जिते । मुख्य दैत्य दानव पुनि तिते ॥
प्रेत पिसाच भूत जे हैं मुनि । कूष्मांड खग मृग जल जिय पुनि॥
भगवत तेज जुक्त है जो मुनि । मन उत्साह जुक्त करि जो पुनि॥
बलरु सक्ति इंद्रिन की जोई । छमा जुक्त सोभा जुत सोई ॥

लज्जाजुत संपत्ति जुक्त जो । बुधिरु अद्भुत बरन जुक्ति सो ॥
पुनि मुनि रूप कुरूप है जितौ । हरि ही कौ सरूप है तितौ ॥
हरि लीला अवतार हैं तिते । मुख्य कबिन नैं बरनें जिते ॥
करननि के मालिन्य हैं जोई । सुनत ही दूर करत हैं तेई ॥
सुंदर परस कहत मैं तो सो । करननि करि पीवौ तुम मों सौ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
षष्ठमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तम अध्याय

दोहा—हरि लीला अवतार जे, कर्मनि सहित बखानि ।
विधि ने नारद सों कहे, ध्याय सातए जानि ॥

ब्रह्मोवाच—
धरनी काढ़नि हेत मुरारी । सूकर की मूरत लै धारी ॥
समुद माहि हिरनाछ्स जोई । करत भयौ बड़ जुधहि सोई ॥
दाढ़नि करि फारयौ ता अैसें । इंद्र बज्र सों पर्बत जैसें ॥
रुचि की आकूती तिय नाम । ता में भए जग्य अभिराम ॥
तिननि दछिना में उपजाए । सुजम नाम जे देव कहाए ॥
इंद्र होय सब कौ दुख हरयौ । तब हरि नाम स्वायंभू धरयौ ॥
देवहूती कर्दम की नारी । ता में प्रगटे कपिल मुरारी ॥
नौ बहननि अतही सुख पायौ । मातहि आत्म ग्यान सुनायौ ॥
ता करि मन उज्जल भयौ ताकौ । पुनि पायौ सरूप तिन ताकौ ॥
अत्रि पुत्र की चाह करी जब । दियौ अपन पौ यौ हरि कही तब॥
ता ते दत्त नाम भयौ हे मुनि । सहसबाहु जदु आदिक जे पुनि॥
पद रज लै जु सुध ह्वै गए । जोगरिध पुनि पावति भए ॥
बिबिध लोक सृजबौ मन धरयौ । तब मैं प्रथम बहुत तप करयौ ॥
तब सनकादिक बपु परकास्यौ । प्रलै में आतम तत्व जो नास्यौ॥
सो अब तत्व इननि मुनि कह्यौ । ता तें रिषिनि हिय हरि लह्यौ ॥
दच्छ प्रजापति की दुहिता जो । मूर्त्ति नाम धर्म की तिय सो ॥

ता में प्रगटे नर नारायन । दुर्घट तपही में पारायन ॥
तप कौ नासन सुन तिय जिती । आईं भईं समर्थ न तिती ॥
क्रोध दृष्टि करि कामहि जारे । क्रोध जु या के तन हिय जारे ॥
ता क्रोधहि नहि कोऊ जरावै । सो हरि सो अतिहि भै पावै ॥
ता ते कामी देव जौ आही । कैसें कहौ हरि कै ढिग जाही ॥
बालक ध्रुव नृप के ढिग जवै । मात कुबचन सरनि सों तबै ॥
पीड़ित होय गयौ बन माहीं । श्रीहरि आय दियौ बर ताहीं ॥
सबके ऊपर ले बैठारे । स्तुति करत सप्तरिष सारे ॥
चल्यौ बेन उत्पंथ मग जबै । सब द्विज स्राप देत भए तबै ॥
ता करि बल ऐस्वर्य गयौ जब । नरक मांहि सो गिरन लग्यौ तब॥
रच्छा हेत प्रार्थना करी । तब हरि देही पृथु की धरी ॥
पुनि पृथु धर तें अन्नादिक सब । दुहि करि जगतहि सुख दीनौ तब॥
नाभि की तिय जु मेरु देवी मुनि । ता में प्रगटे रिषिभ देव पुनि ॥
निज सरूप में थिति है जिनकी । सबै सांत इंद्री हे तिनकी ॥
पुनि सबही कौं सम करि जानें । काहू में आसक्ति न ठानें ॥
जड़ आचरन तिननि कीनौ पुनि । परमहंस पद कहत ताहि मुनि ॥
हेम बरन बेदोमय जोई । जग्य पुरुष सु जग्य में सोई ॥
अखिल देवता रूप हैं जो मुनि । नाम है हयग्रीव जिनकौ पुनि ॥
मेरे मख में प्रगटे जबै । स्वास लेत नासा तें तबै ॥
सुंदर बेद लछना बानी । प्रगट भई हमनें पहिचानी ॥
सब जीवन कौ आश्रै जोई । पृथी कौं आश्रै हैं औई ॥
अैसे मछ रूप भगवान । बैवस्वत मनु लीनें जानि ॥
मेरे मुख तें बेद जु गए । तिनकों फिरि लावति ते भए ॥
प्रलै समें कौ जल भैकारी । ता में बिहरे तेई मुरारी ॥
अमृत हेत देव दानव जब । छीर समुद्र मथन लागे तब ॥
धरयौ पीठ पै कछप ह्वै सो । रई रूप मंद्राचल हो जो ॥
गिर की फिरनि खुजावन करे । ता करि हरिहि नीद सी परै ॥

पुनि हरि श्रीनृसिंह बपु धर्यौ। देवन कौ भय दूर सु कर्यौ ॥
भ्रमति भृकुटि बड़ी डाढ़ हैं जिनकें। हिरनकसिप आयो ढिग तिनकें॥
पकरि ताहि जंघनि पर डार्यौ। नखिन सों तुरत उदर लैं फार्यौ॥
जल बिहार गजराज करै जब। ग्राह नें पाव पकर लीनौ तब ॥
आरत ह्वै अंबुज इक लयौ। पुनि हरि सों यो बोलति भयौ ॥
लोकनाथ सुनि बचन हमार्यौ। मंगल रूप है नाम तिहार्यौ ॥
आदि पुरुष हे कृष्न मुरारी। तीरथ हू तें तुव जस भारी ॥
सुनि हरि चढ़ि सु गरुड़ पै धाए। हाथ में चक्र लिए ही आए ॥
ग्राह के मुख कों डार्यौ फारि। सूंड पकरि गज लियौ उधार ॥
अदिति सुतनि में छोटे बावन। गुनांन में बड़े सुजग्य उपावन ॥
तीन पैंड़ कौ मिस लै कर्यौ। राज्य त्रिलोकी कौ पुनि हर्यौ ॥
धर्म मांहि जौ चलै ताहि हरि। बिना भीख नही भ्रष्ट सकै करि॥
देवनि कौ अधिपति ह्वै बौ जो। बलि कौ नहि पुरुषारथ है सो ॥
जो बलि हरि चरनोदिक जोई। मस्तक पर धारत भयौ सोई ॥
जा बल कौ गुरु श्राप हू दयौ। तऊ न प्रतिग्या छोड़ित भयौ ॥
पुनि बल अपनौ तन हे जोई। कीनौ हरिहि समर्पन सोई ॥
पुनि हंसा अवतार जु भयौ। भगवत ग्यान तुमें जिन दयौ ॥
आत्म तत्व परकासै ग्यान। फिर संतुष्ट भए भगवान ॥
तब तुम सों हरि जोग कहौ सौ। अनायास हरिदास लहैं जो ॥
हरि मनु वंस के पालक जोई। मन्वंतर में प्रगटे सोई ॥
तेज अखंडित चक्र रूप जो। करें दसो दिस में धारन सो ॥
सत्य लोक लो जस बिस्तारे। दुष्ट नृपनि कौ दंड हू धारे ॥
धन्वंतर अपने सुनाम करि। रोगिन के सब रोग लेत हरि ॥
जग्य भाग दैत्यनि रोक्यौ जो। ता भागहि पुनि प्राप्ति होय सो॥
आयु बढ़ावनिहार है जोई। करे प्रबृत्ति बेद अस सोई ॥
धर के कंटक रूप नृपति जे। बढ़ि कें रहे अदिष्ट ही सो ते॥
द्विज द्रोही श्रुति मारग तजे। नरक दुर्खांन के सन्मुख भजे ॥

ते नृप परसराम फरसा करि। मारे बेर इकीस हे मुनिवर ॥
हम पै बहुत अनुग्रह कर्यौ। बपु इछ्वाक वंस में धर्यौ ॥
दसरथ आग्या पाय गए बन। संग भए सीता अरु लछमन ॥
बैर कियौ रावन नें जबै। नास कौ प्राप्त भयौ सो तबै ॥
लंकहि जार्यौ चाहति अैसें। त्रिपुर जरायौ सिव जु जैसें ॥
तिया बिरह सों अति ही तए। अरुन नैंन पुनि हरि के भए ॥
सांप मकर अरु ग्राह हैं जिते। समुद्र में जरन लगे तब तिते ॥
समुद हू अति हीं कांपति भयौ। बेग राम जू कों मग दयौ ॥
इंद्र कौ गज ऐराबति जोई। दांतनि रावनि के उर सोई ॥
मारे तबै उखरि ते गए। जिन जिन दिसिन प्रकासित भए।
रावन तिनकौ पालन करै। गर्वित ह्वै सेना में फिरै ॥
धनुष की टंकारनि सों राम। मारिहैं ताहि हरी जिन बाम ॥
असुरनि करि पीड़ित धर भारी। क्लेस निवारन भए मुरारी ॥
श्रीमन्नारायन हैं जोई। सब नर इनकौ जानति सोई ॥
कोऊ न जान सके मग जिनके। महिमा जुक्त कर्म पुनि तिनके ॥
प्रथम पूतना रूपहि मार्यौ। चरन सों सकट उलटि करि डार्यौ॥
अर्जुन तरु अकास कों गए। घुंटवनि चलति डारि ते दए ॥
बिष सों मरे बाल बछ जिते। कृपा दृष्टि सो ज्याए तिते ॥
बिषही आहि पराक्रम जाके। जीभनि में चंचलता ता कें ॥
ता काली कों दियौ निकारि। दह में कीनो बहुत बिहारि ॥
इनके कर्म अलौकिक हैं सब। तिसि में सूते हुते गोप जब ॥
जरन लग्यौ सूकौ बन तबै। मानत भए मृत्यु तहा सबै ॥
सब पै नेत्र मुदाय लिए तब। अग्नि पान करि राखि लिए सब॥
दधि कौ भाजन फोर्यौ जबै। बांधन लगी जसोधा तबै ॥
जाय जेबरी जो जो ल्यावै। हरि के सों नहि पूरी आवै ॥
पुनि हरि लई जभाई जबै। मुख में लखी त्रिलोकी तबै ॥
जसुधा कौ मन डरपति भयौ। है दई कहा पूतहि ह्वै गयौ ॥

नंदहि बरुन लोक लै गए। तहां जाय पुनि ल्यावति भए॥
मय सुत नें गिरि कंदर भीतर। रोके सखा छुटाए ते हरि॥
सूते गोकुल बासी जिते। लै गोलोक गए हरि तिते॥
इंद्र कौ जग्य मिटायौ जबै। ब्रज पर कोप कियौ तिन तबै॥
ब्रज पर वर्षा कीनी भारी। गोकुल रछा हेत मुरारी॥
सात द्यौस गोबर्धन जोई। छिन अंगुरी पर राख्यौ सोई॥
निसि में खिली चांदिनी जबै। बन में रास कियौ हरि तबै॥
ललित राग मुरली में गायौ। काम दुख जिनके उपजायौ॥
तिन गोपिन कौ लै भाग्यौ जब। संखचूड़ कौ हरि मारयौ तब॥
मल्ल प्रलंब केसी अरिष्ट बक। कंस कुबलियापीड़रु धेनुक।
मिथ्या बासुदेव नर्कासुर। साल द्विबिद बल्वल पुनि संबर॥
रुक्मिम बिदूरथ कालजवन पुनि। बैल दंतबक्रादिक हे मुनि॥
सृंज मत्स कुरु कैकय देस। कंबोज देस के जिते नरेस॥
रन में धनुषनि लै लै आए। मारि मारि हरि धाम पठाए॥
अर्जुन भीमरु बलि द्वारा पुनि। हरि ही ने मारे हैं हे मुनि॥
निसि दिन बुधि घटति है जिनकी। लखि अल्पायु ब्यास मुनि तिनकी॥
सत्यवती में प्रगट होय मुनि। श्रुति द्रुम की साखा कीनी पुनि॥
जिनके बेग लखे नहि जाई। मय नें ऐसी पुरी बनाई॥
तिनके बल असुरनि दुख दीनौ। बहुर सबेद मारग गह लीनौ॥
तब बुधावतार लै धरयो। ता करि उनकौ ग्यान सु हरयौ॥
अरु पाषंड धर्म हैं जिते। तिनकौ दिए सिखाय सु तिते॥
जब साधुनि के घर के माहीं। हरि की कथा होयगी नाहीं।
सूद्र समान नृपति सब ह्वै है। द्विज हू पाषंडी ह्वै जैहै॥
स्वाहा स्वधा वषट ये बानी। ह्वै हैं नाहि जबै सुख सानी॥
तब कलि नासक कलि के अंत। प्रगटेंगे कल्की भगवंत॥
तप मरीचि परजापति हम पुनि। सृष्टि समें हरि ते उपजति मुनि॥
धर्म बिष्नु मनु देव नृपति ते। पालन काल समें प्रगटति ये॥

असुर अधर्म सर्प सिव जिते। नास समें हरि होत हैं इते॥
धर के रज कन गन लेय जोई। हरि गुन गन न सकै पुनि सोई॥
बावन हरि अवतार कियौ जब। चरन अखंडित दिए बढ़ाय तब॥
मायावर्न लो भए जु कांपत। कांपत ब्रह्मलोक भए थांभत॥
मैं अरु सनकादिक ये जे ते। हरि माया बल लखें न ते ते॥
और कहां ते जानें हे मुनि। सब के आदि सेष हैं जो पुनि॥
इक हजार मुख करि गुन गावैं। तऊ अब लों गुन पार न पावैं॥
जा पै हरि की कृपा सोई नर। ह्वै निष्कपट चरन सेवै हरि॥
दुस्तर हरि की माया तरै। हौं मैं देह माहिं नहि करै॥
हरि की माया जानति इते। हम तुम सिव सनकादिक जिते॥
रिभु प्राचीनबर्हि प्रह्लाद। सतरूपा स्वयंभूमनु आदि॥
अंग ध्रुव इछ्वाक ऐल गय। रघु बिदेह मुचकुंद सगर रय॥
अलरक सतधन्वा सुकदेव। गाध्यनु अंबरीष रंतदेव॥
बल अमूर्ति देवव्रत सौभर। सिवी उतंक दिलीप पारासर॥
बिदुर जजाति बिभीषन देवल। हनुमान मांधाता पिप्पल॥
कुंतीसुत पुनि भूरीसेन। श्रुतिदेवादिक रिष्टसेन॥
सरस्वुत बासी उधव पुनि। जानति इत्यादिक नारद मुनि॥
हून भील पुनि सूद्ररु नारी। पसु अरु पाप जीव जे भारी॥
ते जब साधुन के सग चले। माया जानि तरें तब भलें॥
जे न हरि के हिय में धरें। माया जानि क्यों न ते तरें॥
निर्भय सांत मूर्त्ति बिग्यान। सुध रूप सब ठौर समान॥
कारज कारन ते हैं परें। परम तत्व ताही उच्चरें॥
जे ब्यौहार परायन बात। ते न तहां पहुँचति हे तात॥
फल क्रियान कौ नाहि तहां मुनि। तिन सों माया अति लजात पुनि॥
सुख सरूप सोकनि तें रहें। सब कोऊ ताहि ब्रह्म पुनि कहें॥
हरि सें जती धरै मन कौ जब्र। राग दोष टारन साधन तब॥
त्याग देय ज्यों खोदनहार। इंद्र ह्वै तजै खुदन ब्यवहार॥

महत्तत्व करि रचित जगत जो। पंचभूत परकासित है सो॥
न्यारो होय देह तें जबै। नासहि प्राप्त होय तन तबै॥
मंगलदाता जन्मरहित जो। तहँ निर्लेप गगन से हैं सो॥
हे सूत श्रीभगवान जु आहि। करि संछेप सुनायौ ताहि॥
कारज कारन जेतिक जानौ। तिनके कारन हरि ही मानौ॥
यह भागवत नाम है हे मुनि। जा में सब बिभूति संग्रह पुनि॥
यह नारायन माहि कह्यौ सब। या कौ तुम बिस्तार करौ अब॥
सर्वोतम सब कौं आधार। ऐसे हरि भगवान बिचार॥
ता में नर की रति होय जैसें। हे मुनि बरनि कहौ तुम तैसें॥
ईस्वर की यह माया जोई। श्रधापूर्ब सुनै नर कोई॥
वक्ता कौ अनुमोदन करै। माया मोह में ना सो परै॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टम अध्याय

दोहा—जाननि को नृप प्रष्न बहु, किए आठए ध्याय।
जीव ईस संबंध तन, ता कौं कहति मिटाय॥

राजोवाच—

ब्रह्मा ने प्रेरे नारद मुनि। निर्गुन हरि के गुननि मांहि पुनि॥
जा जा सों मुनि कहत भए ज्यौं। तत्वहि मैं जान्यौ चाहति त्यौं॥
अद्भुत हरि की बातें जितीं। करे लोक कौ मंगल तितीं॥
महाभाग मो सों कहौ या तें। मैं सब कौ संग छोड़ौं ता ते॥
सर्वोतम हरि में मन धरों। धरि मन तनहि त्यागि पुनि करों॥
श्रधाजुक्त नित्य हे मुनि। हरि के चरित सुनै गावै पुनि॥
ता के हृदै माहि भगवान। हे मुनि बेग बिराजे आनि॥
कर्न रंध्र द्वारा ह्वै श्री हरि। साधुनि के उर में प्रबेस करि॥
दूर करैं मालिन्यहि ऐसें। घेर में आय बटोही जैसें॥
पंचभूत करि रहित जीव जौ। पंचभूत तन रचित तास सो॥

आप ही तें अथवा कोई कारन। जानत हौ तुम करो निवारन॥
सब लोकन की रचना मय जो। विष्नु नाभि ते कमल भयौ सो॥
ता हरि तन की रचना जैसी। जीवहू की रचना कहौ तैसी॥
ता तें जीवरु ईसुर भीतर। जिती अधिकता सो कहौ मुनिबर॥
जीव उपाधि नियंता जोई। सब भूतनि सृजै बिधि सोई॥
नाभि कमल ते प्रगट्यौ सो मुनि। हरि करुना ते हरिहि लख्यौ पुनि॥
उतपति पालन प्रलै हेत जो। सब के हिय बिराजति हैं सो॥
माया ईस छोड़ि ता मायहि। सोवें कहां कहौ मो सो यहि॥
लोकरु लोकपाल हैं जिते। हरि अंगनि करि बरने तिते॥
लोक लोकपालनि करि हरि पुनि। यह बृत्तांत मोहि कहियै मुनि॥
महा कल्परु बिकल्प कहौ मुनि। काल कौ ज्यौं उन्मान सोऊ पुनि॥
भूत भविष्यत बर्त्तमान जे। जिनतें होंय सब्द ये कहो ते॥
पितर मनुष्य देवतनि की जो। आयु प्रमान कहो हम सो सो॥
छोटी बड़ी काल गति जितीं। हे मुनि हम सों कहिये तितीं॥
जैसी जिती कर्मगति है मुनि। ते नीके मो सो बरनौं पुनि॥
तीन गुननि करि रचित देव ये। तिनकी चाह करत हैं नर जे॥
तिनें कौन कर्म तें पावै। हे मुनि इनैं कहौ जौ भावै॥
दीप नदी पाताल समुद्र। दिसि आकास गिरि गृह नच्छत्र॥
इनकी उत्पति मोहि कहो मुनि। तहां के बासिन कौ सु जन्म पुनि॥
बाहर भीतर जितौ प्रमान। या ब्रह्मांड कौ करौ बखान॥
साधुनि कौ आचर्न कहौ मुनि। बर्नाश्रम सुभाव निश्चै पुनि॥
हरि अवतार चरित हैं जिते। अचिरज रूप कहौ मुनि तिते॥
जुग पुनि जुग प्रमान कहौ हे मुन। जुग जुग के धर्महि कहियै पुनि॥
धर्म है साधार्न बिसेष जे। नरनि के मो सों कहौ सबै ते॥
धर्म तमोली तेली के पुनि। राज रिषिन के धर्म कहौ पुनि॥
नर के धर्म बिपत में जे ते। हे मुनि मोहि सुनावौ ते ते॥
तत्वनि की संख्या कहौ हे मुनि। कारन ता के बल लच्छन पुनि॥

परकार सुनावौ। बिधि अष्टांग जोग की गावौ ॥
हरि पूजा परकार सुनावौ। बिधि अष्टांग जोग की गावौ ॥
लिंग देह जोगिन कौ जोई। जैसें नास होय कहौ सोई ॥
जोगीसनि की गति है जौ पुनि। मौ सौ सबै सुनावौ सो मुनि ॥
धर्मसास्त्र इतिहास पुरान। बेद रूप पुनि करौ बखानि ॥
नरनि कौ उत्पति पालन नास। या कौ मो सो करौ प्रकास ॥
कूवा बावरी बागादिक जे। अग्नि होत्र पुन जग्यादिक ते ॥
इनकी बिधि जु सुनावौ हे मुनि। धर्मादिक की बिधि कहौ पुनि॥
जीयसवासित जन्म जनावौ। बहुर दंभ कौ जन्म सुनावौ ॥
जियनि कौ बंध मोछ कहौ हे मुनि। बंध मोछ कौ रूप कहौ पुनि ॥
हरि स्वतंत्र माया करि जैसें। क्रीड़ा करे कहौ मुनि तैसें ॥
प्रलै समें माया तजि के जो। साछी ह्वै कै रहति कहो सो ॥
यह जु दास नें पूछौ जोई। हे मुनि मोहि कहौ तुम सोई ॥
यह तुम सब जानति हौ ऐसें। ब्रह्मा सब कछु जानति जैसें ॥
पहले रिषिन कियौ जो हे मुनि। थित होय पिछले हू ता में पुनि॥
कृष्न कथा में पान करत मुनि। जल अरु अन्न सबै छोड़े पुनि॥
तऊ मम प्रान जायगे नाहिन। एक बिप्र के श्राप सु ता बिन ॥

सूत उवाच—
ऐसें कृष्न कथा को नृप जब। पूछी श्री सुक ह्वै प्रसन्न तब ॥
बरन्यौ श्रीभागवत पुरान। सब बेदनि की आदि समान ॥
जो हरि जू नें बिधिहि सुनायौ। हे मुनि ब्रह्म कल्प जब आयौ ॥
सब में श्रेष्ट परीछत राजा। सुक सो जो पूछौ सुख काजा ॥
तिनके उत्तर में मन दियौ। श्रीसुक लै आरंभहि कियौ ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवम अध्याय

दोहा—नवें ध्याय बिधि सों कह्यौ, हरि जू भागवत सार।
सो श्री सुक नृप सो कहत, उत्तर हू ता द्वार ॥

सुक उवाच—
सुध रूप आत्मा जो आहि। माया बिना देह नहि ताहि ॥
जैसें बिना अबिद्या होयन। स्वप्न देह संबंध न रहि पुन ॥
बहु स्वरूपिनी माया करि सो। बहु रूपी भासति हैगो सो ॥
देहादिक में रमति अहो मुनि। गहत अहंता ममता कौ पुनि ॥
सुध रूप माया तें जो परै। मोह छोड़ि ता में सुन बिचरै ॥
त्यागि अहंता ममता तबै। पूर्न रूप में राजै जबै ॥
कपट रहित तप बिधि ने कियौ। रीझि ताहि हरि दरसन दियौ ॥
आतम तत्व अति सुध जु आहि। सुधि हेत हरि भाष्यौ ताहि ॥
सब कौ गुरु ब्रह्मा है जोई। बैठि कमल आसन पर सोई ॥
जग के सृजबे में मन दयौ। ऐसी बुधि न पावति भयौ ॥
जाकर सृष्ट होय यह सबै। बड़ौ सोच पायौ बिधि तबै ॥
इक दिन जल में सब्द सु भयौ। तप तप सो बिधि नें सुनि लयौ॥
सो तप निष्किंचन कौ है धन। याही तें सु कहत तपोधन ॥
सुनि कें बचन भयौ ठाढ़ौ सो। जा ने कह्यौ बचन यह सो कौ॥
ता कौ काहूँ न देख्यौ जबै। बैठि गयौ आसन पर तबै ॥
पुनि बिधि सोई बचन बिचारयौ। करि बिचार तप में मन धारयौ॥
सावधान सो तप में भयौ। इंद्री पवन जीत मन लयौ ॥
सबनि प्रकास करै तप जोई। दिव्य हजार बरस कियौ सोई ॥
सफल ग्यान ब्रह्मा कौ आहि। कौऊ न तपसी पावै ताहि ॥
सब तें परै न कौऊ जा ते। क्लेस मोह भय दूर तहां ते ॥
ग्यानवंत गावत हैं जा कां। ऐसौ लौक दिखायौ ता कौ ॥
जा में नाहि न तमो रजो गुन। नाहि दुहुनि सों मिल्यौ सतोगुन॥
काल प्रभाव न माया जहां। और कहां ते होय सु तहां ॥
असुर सुरनि करि पूजत जेई। सदा पार्षद हैं तहां तेई ॥
उज्जल स्यांम सरूप हैं जिनकै। अमल कमल दल नैंन हैं तिनकै॥
अति सुंदर पीतांबर धरें। लखि सुकुमारता सुरभी परें ॥

मनिन की कंठ धुकधुकी राजै। चार भुजा सोभा जुत छाजें ॥
सूगा मनि तन आगे फीके। माला कुंडल मुकुट है नीके ॥
भक्तनि के बिमान छए भारी। गोर बरन नारी सुखकारी ॥
तिन करि लोक भयौ सोभित यों। बिजुरी जुत मेघनि सो घन ज्यौं॥
तहा हरि चरननि को पूजति सो। बहुत बिभूतिन करि लच्छमी जो॥
बैठि हिंडौरा बहु सुख पावत। भ्रमर बृंद सब कीरति गावति॥
सो लच्छमी हरि कर्मनि गावै। गाय गाय मन में सुख पावै ॥
साधुनि के हरि पालक जोई। जग पालक श्री पालक सोई ॥
पूरन जग्यनि के पालक जो। नंद सुनंदनि करि सेवित सो ॥
भक्तनि सों सन्मुख प्रसन्न पुनि। अति ही सुखदाई है चितउन ॥
हसनि लसनि छबि बदन बिराजे। लोचन अरुन महा छबि छाजें॥
चारभुजा पीतांबर धारी। कुंडल मुकट महा सुखकारी ॥
पुनि ते सिंघासन पर राजति। उर में लछमी रेख बिराजति ॥
और कहूँ एस्वर्य न जेई। तिन करि जुक्त आहि हरि तेई॥
सोरह नौ सक्तिनि जुत जोई। अपने धाम रमति हैं सोई ॥
तिनकौ ब्रह्मा देखति भयौ। हिये माहि आनंद ह्वै गयौ ॥
तन में रोमांचित ह्वै आए। प्रेम नें जल में नैंन भिजाए ॥
परमहंस मारग करि जिनकों। पैये नवति भयौ बिधि तिनकों॥
हरि नें आग्या दीनी जोई। जग रचना बिधि मानी सोई ॥
ता तें हरि प्रसन्न भए भारी। बिधि सिर पर कर धरयौ मुरारी॥
पुनि बोले हरि हस कें ताहि। ढिग में अति प्रसन्नता जाहि ॥

श्रीभगवानुवाच—
हे बिधि तें दुस्तर तप कियौ। जग के सृजबे में मन दियौ ॥
तो पर भयौ प्रसन्न अब सो मैं। दूर कपटि जोगिन कों जो मैं ॥
सब मंगल प्रापति होहु तो कौं। मन बांछित बर कहिये मो कों ॥
सुख के हेत क्लेस है तब लौं। होत न दरसन मेरो जब लौं ॥
लोक हमारे कौ दरसन जो। मम इच्छा प्रभाव करि कै सो॥

तप तप तें इकांत सुनि लियौ। सुनि कें दीरघ तप पुनि कियौ॥
मोहित भयौ कर्म में तू जब। सो उपदेस कियौ मैं ही तब ॥
मैं तप ह्वै ह्वै तप मेरो। तप ही मेरी सक्ति सु हेरौ ॥
उत्पति पालन प्रलै सु जितौ। तप ही करि मैं करति हो तितौ॥
ब्रह्मोवाच—
तुम सब के धिष्टाता भारी। सब बुधिन में थिति सु तिहारी॥
बिना आवरन ग्यान सु ता करि। लखति मनोरथ सबके हे हरि ॥
प्राकृति रूप कहत तुम जोई। मांगत मैं देवौ हरि सोई ॥
स्थूल सूछम जो रूप तिहारौ। जानें हम यह बर सु हमारौ ॥
अहो हरि यह जु बिस्व है जोई। नाना सक्तिन करि जुत सोई ॥
पालन प्रलै सृजन या कौ जो। सत संकल्प जास कौ तुम सो ॥
आप ही आपन जोगमाया करि। आपे को ब्रह्मादि रूप धरि ॥
हे हरि तुम क्रीड़ति हौ ऐसें। आप जाल रचि मकरी जैसें ॥
यह सब जाननि जोग्य है जोई। हे हरि देहु बुधि मोहि सोई ॥
तजि आलस मैं करिहौ सो सो। हे हरि तुम आग्या दई जो जो॥
सृजति मोहि हंकार न होई। हे हरि करौ अनुग्रह सोई ॥
तुम सन्मान करयौ मेरौ यों। सखा सखा कौ करत अहो ज्यौं॥
तुमरी आग्या कों मैं करिहों। अब्याकुल तन चित में धरिहों॥
उत्तम मध्यम प्रजानि सरजति। हों कर्त्ता यह गर्व होहु मति ॥
श्रीभगवान उवाच—
मेरौ परम गुह्य जो ग्यान। पुनि है सोई सहत बिग्यान ॥
सहत रहस्य कहो मैं तो सौ। ग्रहन करौ सुनि कें तुम मो सों॥
रूप सक्ति गुन कर्म हमारे। सब अनुभौ में होहु तिहारे ॥
जैसो मैं तैसौ जानौ तुम। तुम पर यह अनुग्रह कीनौ हम॥
कार्ज कार्न माया हू नहि जब। जग के पहलें हो मैं ही तब ॥
मध्य अंत में हो मैं ही मुनि। जगहू सब मो कौ जानौ पुनि ॥
हे बिधि हरि बिन दीखै जोई। मेरी माया जानौ सोई ॥

दृग बिकार करि चंदा जैसें। लखिये बहुत लहौ तुम तैसें।।
विद्यमान परमात्मा जोई। दीखै नाहि मो माया सोई।।
हे बिधि राहु बिराजति जैसें। दीखत नाहि नरनि कौं तैसें।।
छोटे बड्डे जंतुन भीतर। पंचभूत सब रहे ब्याप करि।।
पुनि तिन ते न्यारे है जैसे। मैं हूँ सब जंतुन में तैसें।।
जो कोउ आत्म तत्व लह्यौ चाहै। सो जन इतनौई अवगाहै।।
सब ते श्रीहरि न्यारे आही। पुनि हैं सब जंतुनि के माही।।
हे बिधि चित्तहि एकाग्रइ करि। मेरौ यह मति लै हिय में धरि।।
तुम मुनि कल्प बिकल्प सु माही। कबहूँ मोह पाय हो नाहीं।।

शुक उवाच—

पूज्य सबनि कौ बिधि जो आहि। ऐसें हरि सु सुनायौ ताहि।।
पुनि ब्रह्मा के देषति श्रीहरि। अंतर्धान रूप लीनौ करि।।
अंतर्धान होय जो गए। बिधि ताहि अंजुल जोरत भए।।
सर्व भूत मय विस्व जु आहि। पहलौ सौ सृजति भयौ ताहि।।
धर्मनि कौ पालक बिधि जोई। इक दिन जग के सुख कौ सोई।।
पुनि अपनौ मनोरथ करयौ। जम नियमनि में मन लै धरयौ।।
हे नृप नारद भक्त जु भारौ। सब बेटनि में बिधि कौं प्यारौ।।
सुंदर सील नम्रता भारी। पुनि जा के बस इंद्री सारी।।
लह्यौ चाहै सो हरि माया कौं। करत भयौ संतुष्ट पिता कौं।।
लोक पितामह ब्रह्मा कौ जब। नारद नें संतुष्ट लख्यौ तब।।
नारद मुनि पूछत भयौ यह सब। हे नृप तुम मोहि पूछत जो अब।।
जुत दस लछन भागवत जोई। नारायन बिधि सों कह्यौ सोई।।
सो बिधि कहौ नारद सों सबै। बिधि सो नारद पूछ्यौ जबै।।
अति तेजस्वी व्यास महा मुनि। पार ब्रह्म कौ ध्यान करत पुनि।।
रहत सरसुती कौ तट जहां। कह्यौ जाय नारद मुनि तहां।।
हरि तें लोक भयौ यह जैसें। हे नृप मैं तोही कहिहौं तैसें।।

अरु तुम मो सो पूछ्यौ जो जो। क्रम तें तुमें सुनैहों सो सो।।
इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे भाषा रसजानि कृते
नवमोऽध्यायः ।। ९ ।।

दशम अध्याय

दोहा—नृप प्रस्ननि के उत्तरनि हेत भागवत द्वार।
दसे ध्याय आरंभ सुक करत यहै निर्धार।।

शुक उवाच—

सर्ग बिसर्ग स्थान पोषन पुनि। ऊति मन्वंतर ईस कथा सुनि।।
प्रलै मुक्त आश्रै पुनि जेई। तहा आहि दस लछन येई।।
दसए तत्व ग्यान के हेत। नौ लछननि इहां कहि देत।।
सक्ति बेद द्वारा पुनि येई। ग्यानवान बरनति सुनि तेई।।
तत्वनि की उत्पति है सर्ग। बिधि जो कीनौ सोई बिसर्ग।।
मर्यादा पालनि करि जोई। हरि उत्कर्ष स्थान है सोई।।
हरि कौ अनुग्रह पोषन जानौ। कर्म बासना ऊति सु मानौ।।
सुंदर धर्मन की प्रबृत्ति जो। हे नृप मन्वंतर जानौ सो।।
हरि हरि दासन की जु कथा जो। हे नृप है ईसानु कथा सो।।
जीव सबासनि सैंन जु करै। पंडित सो निरोध उच्चरैं।।
तजि अभिमान हरिहि जो पावै। हे नृप सोई मुक्ति कहावै।।
उत्पति पालन प्रलै करै जो। पार ब्रह्म हरि आश्रै है सो।।
आध्यात्मक जीव जो आहि। इंद्रिय धिष्टाता लहु ताहि।।
होत बिभाग दुहुनि कौ जा तें। देह आधिभौतिक यह ता ते।।
तीनौ एक रहत होय जबै। एकहू को न सिध होय तबै।।
इन तीननि कौ देखै जोई। स्वाश्रय परमात्मा है सोई।।
जबै सुध परमातम श्रीहरि। न्यारे भए जु अंड भेद करि।।
अपने रहिबे कौं हरि तबै। अति पवित्र जल रचे सु सबै।।
अपने रचे हुते जल जेई। सहस बरस तिन में रहे तेई।।
नर श्रीहरि ता नें उपजाए। ता तें जल ये नार कहाए।।

नारनि मांहि अयन कियौ जा तें। नारायन हरि नाम है ताते॥
पंचभूत अरु कर्म काल पुनि। बहुर स्वभाव जीवन कें सुनि॥
हरि के नुग्रह ही ते जोग। हरि नुग्रह बिन है जु अजोग॥
जोग सेंज तें उठिके हरी। बहुत होन कों इच्छा करी॥
तब तेजोमय बीरज जोई। त्रिबिधि कियौ माया करि सोई॥
अधिभूताध्यात्म अधिदेव। तीन प्रकार किये हरि देव॥
पुरुष कौ एक बीर्य जो आहि। त्रिबिधि भयौ जैसें सुनि ताहि॥
चेष्टा करति भए हरि जबै। हिय आकास तें प्रगटी तबै॥
तन मन इंद्री की जु सक्ति जे। ताही तें प्रगटे सु प्रान ये॥
जिन प्रानंनि पाछे इंद्री सब। चेष्टा करत हे हे राजन अब॥
तिन बिन चेष्टा करें न ऐसें। नृप संग नृपति टहलुवा जैसें।
चंचल प्रान भए भीतर जब। पुरुषहि भूख प्यास लागी तब॥
खान पियन कौ मन भयौ जबै। प्रथम भयौ मुख ता कें तबै॥
ता मुख तें पुनि तालू भयौ। ता तें उदै जीभ ने लयौ॥
छह प्रकार के रस भए ता तें। जिनकौ ग्यान होत रसना तें॥
भई बोलबे की इच्छा जब। ता कै अग्नि देवता भयौ तब॥
बानी इंद्री भई तहां तें। प्रगटी बोलनि क्रिया उहा तें॥
सो वह बोलनि जल के माही। बहुत काल रुकि रही भई नाही॥
पवन चलायमान भई जबै। नासै छेद भए ये तबै॥
सूंघनि हेत घ्रान इंद्री पुनि। बायु देवता गंध बिषै सुनि॥
रहत प्रकास आप कौ जबै। देखनि की इच्छा भई तबै॥
आंखि भई दैवत रबि भयौ। इंद्री चछु रूप गुन लयौ॥
बेद गान सुनिबे मन भयौ। तबही काननि उदै सु लयौ॥
दिस देवता श्रोत्र इंद्री पुनि। सब्दनि कौ सुनिबौ तिनकौ गुन॥
बस्तु की कौमलतारु कठिनता। लघुता गुरुता उष्न सितलता॥
जाननि की इच्छा भई जबै। चर्म स्थान भयौ तहां तबै॥
इंद्री रोम देवता द्रुम पुनि। अरु खुजायबौ है ता कौ गुन॥
तिही चर्म स्थान के भीतर। इंद्री भई तुचा हे नृप बर॥

पवन देवता ता कौ जानौ। स्पर्स करन गुन ता कौ मानौ॥
लेंन देंन को मन भयौ जबै। ता कें दोय हाथ भए हे तबै॥
इंद्र देवता बल इंद्री पुनि। लैबौ दैबौ हैं तिनकौ गुन॥
चलैबे की इच्छा भई जबै। दोउ पाय होत भए तबै॥
बिष्नु देवता गति इंद्री पुनि। जग्य बस्तु ल्यायबौ तास गुन॥
सुत करि चाह स्वर्ग की भई जब। सिष्नु स्थान भयौ ता के तब॥
तहा प्रजापति देव भयौ पुनि। इंद्री उपस्थ बिषै ता कौ गुन॥
मल त्यागन इच्छा भई जबै। गुद स्थान प्रगट भयौ तबै॥
मित्र देव इंद्री सु पायु पुनि। मल कौ गिरिबौ है तिनकौ गुन॥
और देह की चाह भई जब। नाभि स्थान भयौ ताके तब॥
मृत्यु देव इंद्री सु अपान। दुहुन कौ बिषै भयौ मर जान॥
भोजन जल संग्रह इच्छा जब। भई कूख ताकें प्रगटी जब॥
अंतरु नाड़ी इंद्री तहां। समुद्रु नदी देवता जहां॥
तुष्टि पुष्टि हैं बिषै सु तिनकी। क्रम ते लहो भिन्नता इनकी॥
हरि माया जाननि इच्छा जब। भई हदै स्थान भयौ तब॥
मन इंद्री ससि देव भयौ पुनि। काम और संकल्प तास गुन॥
चाम लोहू तुच मज्जा मेद। हाड़ मास धातुनि के भेद॥
धर जल तेज रची ये जानौ। प्रान बायु नभ जल तें मानों॥
सब्दादिक मय हैं इंद्री ये। अहंकार मय सब्दादिक ते॥
मन बिकारमय और बुधि जो। करवावैं बिकार अनुभौ सो॥
स्थूल रूप हरि कौ यह आहि। हे नृप तोहि सुनायौ ताहि॥
भूम्यादिक आवरन आठ जे। तिन करि आवृत हैंगे हरि ये॥
और एक सूछम हरि तिन जो। उत्पति थिति लय पावति नहि सो॥
नित्यरु निर्बिसेष ताहि जानौ। बानी मन तें परे सु मानौ॥
ये दोऊ हरि जू के रूप। मैं तो सो नीकें कहे भूप॥
ग्यानवान दोउ ग्रहन न करै। माया करि जा ते हरि धरै॥
सब कर्मन करि रहित सोई हरि। माया करि ब्रह्मा कौ बपु धरि॥

सृजे बाच्य बाचक ता करि ते ॥
नाम सरूप क्रिया हैं सरिजे । मनु सुर पितर प्रजापति पसु खग॥
रिषि चारन गंधर्ब सिध मृग । अहि किंपुरुष सर्प बिद्याधर ॥
गुह्यक असुर अप्सरा किन्नर । कूषमांड उन्माद भूत तरु ॥
उरग रच्छ गंधर्ब मातृ अरु । जातुधान बेताल सु तिते ॥
प्रेत पिसाच बिनायक जिते । स्वेदज और जरायुज अंडज ॥
जल थल नभ बासी पुनि उद्भिज । सरीसृपादि सृजे हरि इते ॥
जड़ जंगम नछत्र गिरि जिते । कोउ जा में मिलि रहे दोऊ ॥
कोऊ पुन्यातम पापी कोऊ । सतगुन तें होय सुर यह मानौ ॥
ये त्रय गति कर्मनि की जानौ । तमगुन तें होय नरक जीव जे ॥
रजगुन तें सब होत हे नर यें । ओर गुननि सों मिलि करि सोई॥
हे नृप एक जु गुन है जोई । तीन तीन बिधि होय जां तेई ॥
एक एक गुन हैं नृप जेई । सुर नर पसुनि माहि बपु धरि धरि॥
विष्णुरूप जगकर्त्ता जौ हरि । पालन करेरु सुख उपजावै ॥
सबनि धर्म मग माहि चलावें । काल अग्नि सिव रूप होय सो ॥
अपनौ सृज्यौ बिस्व यह है जो । पवन मेघ के गन को जैसें ॥
हे नृप संहारति हैं अैसें । सर्बग्यनि नें कियौ बखानि ॥
इह प्रकार करि श्रीभगवान । गुनमय हरि हि न जानें सोई ॥
जग में ग्यानवान हे जोई । हरि कें कछु अभिमान हें नाही॥
जग के जन्म कर्म के माही । माया करि सु प्रकासति जातें ॥
कवि हू बरनन करे न यातें । हे नृप तोहि कह्यौ मैं सोई ॥
महत विकल्प कल्प विधि जोई । महतत्वादि लह्यौ विकल्प में ॥
जड़ जंगम सब होय कल्प में । अैसौ जो है काल सु ताकौ ॥
रूप कल्प लच्छन है जा कौ । पाद्म कल्प तुम सुनि लेहु अबै ॥
कहिहौ मैं प्रमान नृप सबै ।
सौनक उवाच—

महाभागवत बिदुर हे जोई । दुस्तज बंधुनि तजि करि सोई ॥
जाय तीरथनि माझि अन्हायौ । सूत जू यह तुम हमें सुनायौ ॥

तत्व बिचार बिदुर मैत्रे मुनि । जहा कियौ सो हमें कहो पुनि ॥
पूछें पीछे मैत्रे मुनि ज्यौ । कह्यौ बिदुर सो हमें कहो त्यों ॥
अहो सूत जू बिदुर चरित सब । तुम नीकें बरनौ हम सौ अब ॥
बिदुर नें बंधु त्याग क्यों करे । फिर कहौ कैसे घर में बरे ॥
सूत उवाच—
तुम हम सो पूछौ है जोई । श्री सुक सो नृप पूछयौ सोई ॥
श्री सुक नृप सो कह्यौ पुनि जैसें । मो सो सुनौ अहौ मुनि तैसें ॥
दोहा—श्रीप्रियादास रस रास की, पाय कृपा रस जानि ।
आगम कियौ निपटै सुगम, दुतिय स्कंध बखानि ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां
भाषा रसजानि कृते दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥
॥ द्वितीय संपूर्णनं ॥



तृतीय स्कंध:

प्रथम अध्याय

दोहा—रसिक भूप हरि रूप पुनि, श्रीचैतन्य सरूप।
हृदै कूप अनुरूप रस, उझलो बहै अनूप ॥
आयु हीन लखि बंधु सब, बिदुर त्याग उठि जाय।
उधव सो संबाद किय तृतिय पहल के ध्याय ॥

श्रीशुक उवाच—
हे नृप तुम पांडव सुखकारी। तिनके भए सु दूत मुरारी ॥
दुर्योधन गृह त्यागति भए। अपनौ मानि बिदुर घर गए ॥
अति संपति सो रह्यौ सुछाय। सोऊ ग्रेह बिदुर छिटकाय ॥
बन में जाय मैत्रे सो सो। पूछति भए तुमनि पूछयौ जो ॥

राजोवाच—
कहां मिले मैत्रेय बिदुर पुनि। कब संवाद भयौ कहिये मुनि ॥
साधुनि के संमत नीकौ जौ। बिदुर भक्त पूछयौ ह्वै है सो ॥

सूत उवाच—
यो पूछो सर्वग्य महा मुनि। बोले हर्राष अहौ राजन सुनि ॥
जब राजा धृतराष्ट्र अंध जो। अपने महा दुष्ट बेटनि सो ॥
पोषन लगो पाप करि आछै। लघु भैया के बेटनि पाछै ॥
हे नृप लाख भवन में जारे। पिता हीन हू ते न बिचारे ॥
जब सुत बधु द्रोपदी रोवति। असुवनि करि कुच कुंमकुंम धोवति॥
तास केस गहि सभा सु माही। लै आए सुत बरजे नाही ॥
सांचे साधु धर्म सुत नृप बर। जीते जूवा में अधर्म करि ॥
तिननि आय बन तें माग्यौ जब। तिन अति मूढ़ न बट दीनों तब ॥
जब पांडवनि जगतगुरु हरि जो। तिनकी सभा माहि पठयै सो ॥
तिननि अमृत से बचन कहे जे। तिन पापिष्ट न कान धरे ते ॥
जब धृतराष्ट्र मंत्र के हेत। बुलए मंत्री बिदुर निकेत ॥

तिननि जाय तब तहा कह्यौ सो। मंत्री अजे! सराहति हैं जो ॥
तुव अपराध धर्म सुत सहै। ताहि देहू बट मो मति यहै ॥
भीम सांप रिस करि फुंकारति। जा तें तुमहू अति भय धारति॥
अहो जदु कुल के पूज्य मुरारी। जीत लए तानें नृप भारी ॥
पुर में रहत देव बिप्रनि जुत। ता नें अपनें किये पांडु सुत ॥
दोषमूर्त्ति यह घर में आहि। पुत्र मानि तुम पोषति जाहि ॥
यह हरि द्रोषी बिमुख सो अहो। तजो बेग कुल मंगल चहो ॥
क्रोध भर्यौ दुर्योधन यह सुनि। संग दुसासन सकुनि कर्न पुनि॥
परम साधु श्रीबिदुर जु आहि। हे राजन निरादर्यौ ताहि ॥
अहो ह्या कों नें याहि बुलायौ। दासी पुत्र कुटिलता छायौ ॥
जा सों पलै तास कौ नाही। देखो मिलि रह्यौ बैरिन माही ॥
काढ़ो बेग न राखो पुर में। बचन बान ये छिद गए उर में॥
धनुष द्वार धरि जात सु भए। माया मानिन दुख तै छए ॥
पुन्य कौरवनि कौ हौ जितौ। बिदुर रूप धरि गयौ सु तितौ ॥
हरि की मुक्ति छेत्र जहां जहां। पुन्य हेत ते गमनें तहां तहां ॥
पुन्य बाग गिर कुंज सरित सर। गमने इकले जहा जहा रहि ॥
सो वे धरनि तीर्थनि न्हाय। बहुर पवित्र जीवका खाय ॥
लखे न सुजन भेष अस धरे। हरि के तोषक बृत आचरें ॥
ऐसें भारत खंड मझारी। फिरत प्रभास गए सुखकारी ॥
इतनें राजचक्र वै है जो। हरि सहाय करि कियौ पार्थ सो॥
तहा सुहृदन कौ नास सुन्यौ यौं। बंस अगिन करि बासनि कौ ज्यौं॥
तिनको सोच करति पुनि आछें। चले सरसुती समुहें पाछें ॥
अग्नि बायु पृथु मनु सुक्रासित। श्राधदेव गुह गो सुदास त्रित ॥
इनके जुदे जुदे तीरथ जे। तहा बिदुर जू नें सेये ते ॥
औरौ सेये हरि के धाम। रचे जु देव रिषिन अभिराम ॥
जिनमें हरि मंदिर चक्रांकित। जिनके देखे हरि आवति चित ॥
तहां ते लंघि बहु देस सुधीर। मत्स्य कुरु जंगल सौबीर ॥

पुनि आए श्रीजमना जहां । लखे भागवत उधव तहां ॥
सांत मूर्त्ति पुनि हरि के दास । सिष्य बृहस्पति के गुनरास ॥
लपटि प्रेम सों पुलकित गात । बंधुनि की पूछी कुसलात ॥
बिधि बिनती सो प्रगटे अहौ । राम स्याम सुख सो है कहौ ॥
कहौ कौरवन के हितकारी । श्रीवसुदेव सुखी है भारी ॥
हमरे बहनेऊ उदार सो । पित ज्यौं बहननि कों तोषति जो॥
सेनानी प्रद्युम्न जु अहौ । महाबीर सुख सो है कहो ॥
पहले जन्म काम जो गायौ । द्विजनि अराध रुक्मिनी पायौ ॥
जदु दासार्ह भोजपति अहौ । उग्रसेन सुख सो है कहौ ॥
राज आस कौ छोड़ि रह्यौ जो । कमलनैंन पुनि भूप कियौ सो ॥
महारथी हरि की सम अहो । सांब नाम सुख सो है कहौ ॥
स्वाम कार्त्तिक पहल जन्म जो । ब्रत करि जांबवंती पायो सो ॥
अर्जुन तें धनुर्बिद्या पाई । सो सात्यकि सुख सो सुखदाई॥
जिन हरि सेवा करि हरि की गति । पाई जो जोगिन को दुरये अति॥
हरि के भक्त अनघ पुनि अहो । श्रीअक्रूर सुखी है कहौ ॥
जो हरि पद रज में लुटि गयौ । प्रेम पाय के बिह्वल भयौ ॥
हरि की मात देवकी जू जो । कहो अदित ज्यो सुख सो है सो॥
जो स्व गर्भ में देवहि ऐसें । धरति भई श्रुति जग्यनि जैसें ॥
पुनि साधुन सुखदाई अहौ । श्रीअनिरुध सुखी हैं कहौ ॥
जिन्हें सब्द कौ कारन गावें । मन के प्रेरक ईस बतावैं ॥
औरो हरि कौ ह्वै अनन्य जे । अनुगत भए है सुख सो सो ले॥
चारुदेष्न गद हृदीकादि जुत । बहुरो प्रिय सतभामा के सुत ॥
अर्जुन कृष्न सुजन करि अहौ । पालति धर्म धर्मसुत कहो ॥
बिभौ देखि जिह सभा मंझारी । दुर्योधन दुख पायौ भारी ॥
अहि सो भीम भरयौ रिस माही । अपराधिन पै करी कि नाही ॥
अहो गदा की फेरन माही । जा के पाव सहै धर नाही ॥
बड़े तेजस्वी अर्जुन अहौ । वैरी मारि सुखी है कहौ ॥